

कार्यशाला के प्रवर्तक
सेंटर फॉर फाईनेंसिएल अकाउटेबिलिटी
रोजा लक्समबर्ग स्ट्रिपटंग

विश्व व्यापार संगठन और
मुक्त व्यापार समझौतों का खुलासा

विश्व व्यापार संगठन और
मुक्त व्यापार समझौतों
का झुलासा

ट्रांसक्रिप्शन - एन कुमार
कवर एवं डिजाइन - कोकिला भट्टाचार्य
हिंदी अनुवादक - चिन्मय मिश्रा

प्रकाशन
सेंटर फार फाईनेंसियल एकाउंटेबिलिटी
आर २१, साउथ एक्सटेंशन पार्ट - २, नई दिल्ली - ११००४९
वेबसाइट - www.cenfa.org
ईमेल - info@cenfa.org

रोजा लक्समबर्ग स्टिफ्टिंग, लाइजन आफिस, नई दिल्ली,
ब-१५, एसडीए मार्केट, नई दिल्ली - ११००१६
वेबसाइट : <https://www.rosalux.in>
ईमेल : south-asia@rosalux.org

इस प्रकाशन को रोजा लक्समबर्ग स्टिफ्टिंग द्वारा संघीय गणराज्य जर्मनी (फेडरल रिपब्लिक ऑफ जर्मनी) के आर्थिक सहयोग और विकास मंत्रालय द्वारा प्रदत्त अनुदान से प्रायोजित किया गया है। यह प्रकाशन या इसके अंश को तब तक स्वतंत्र रूप से प्रयोग में लाया जा सकता है जब तक कि इसके मूल प्रकाशन के व्यवस्थित संदर्भ को उपलब्ध कराया जाए। इस प्रकाशन में प्रयुक्त सामग्री की पूर्ण जिम्मेदारी सेंटर फॉर फाईनेंसियल अकाउंटेबिलिटी की है और यह आवश्यक नहीं है कि इससे आर एल एस का दृष्टिकोण प्रकट होता हो।

नई दिल्ली - दिसंबर - २०२१



विषय वस्तु

आयोजकों के संबंध में 1

कार्यशाला के अनुदेशकों (फेसिलिटेटर्स) के संबंध में 2

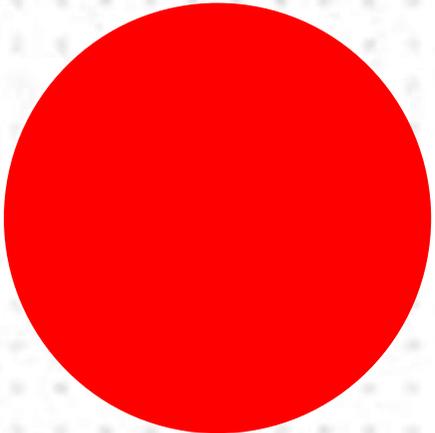
संपादकीय टिप्पणी 4

प्रस्तुतिकरण I : विश्व व्यापार संगठन (डब्लू टी ओ) और वैश्विक व्यापार व्यवस्था का रहस्योद्घाटन 5
रांजा सेनगुप्ता

प्रस्तुतिकरण II : भारत एवं मुक्त व्यापार समझौते : एक लेखाजोखा (बेलेंस शीट) 12
शालिनी भुटानी

प्रस्तुतिकरण III : अपने समय के व्यापार एवं राजनीतिक अर्थव्यवस्था पर कुछ प्रकाश 20
बिस्वजीत धर

प्रस्तुतिकरण IV : विश्व व्यापार संगठन, मंत्रीस्तरीय बैठकें एवं समय-समय पर होने वाली बातचीत 25
डी. रवि कांत



आयोजनकर्ताओं के संबंध में

सेंटर फॉर फाईनेंसियल अकाउंटेबिलिटी

सेंटर फार फाईनेंसियल अकाउंटेबिलिटी वित्तीय संस्थानों में पारदर्शिता और जवाबदेही के कार्य में जुटा है और इस तरह के प्रयत्नों को बढ़ावा देने के कार्य में लगा हुआ है तथा इस तरह के प्रयत्नों को बढ़ावा देने हेतु मदद करता है। हम आंदोलनों, संगठनों, कार्यकर्ताओं, छात्रों एवं युवाओं को इस संघर्ष में जुड़ने हेतु शोध, अभियान और प्रशिक्षण का प्रयोग करते हैं, जिससे कि वे संघर्ष में शामिल हो पाएं और हम उन अभियानों में हिस्सेदारी करते हैं जिससे कि नीतियों में परिवर्तन आ सके एवं बैंकिंग और अर्थव्यवस्था को लेकर सार्वजनिक विमर्श में बदलाव आ सके। हम राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों के निवेश पर निगरानी रखते हैं, हम देश के बैंकिंग क्षेत्र और अर्थव्यवस्था को प्रभावित करने वाली नीतियों से भी जुड़े रहते हैं। कार्यशालाओं और अल्पअवधि के पाठ्यक्रमों के माध्यम से वित्तीय विश्व का रहयोद्घाटन भी करते हैं और हम बैंको एवं सरकारों को अधिक पारदर्शी एवं जवाबदेही बनाने में नागरिकों की मदद करते हैं।

रोजा लक्समबर्ग स्टिफ्टिंग

रोजा लक्समबर्ग स्टिफ्टिंग (आर एल एस) एक जर्मन राजनीतिक प्रतिष्ठान है जो कि लोकतांत्रिक समाजवादी आंदोलन का भाग है। रोजा लक्समबर्ग (१८७१-१९१६) की सच्ची विरासत के दृष्टिगत यह कामगारों एवं महिला अधिकार आंदोलनों के साथ एकजुटता से खड़ा है। यह संगठन राजनीतिक विकल्पों को लेकर विमर्श एवं गंभीर चिंतन को बढ़ावा देने के साथ ही साथ सामाजिक विकास हेतु शोध केंद्र भी है। आरएलएस का जर्मनी के राजनीतिक दल डाई लिंकी के साथ निकट का संबंध है। आर एल एस जर्मनी के साथ ही साथ विश्वभर में राजनीतिक शिक्षा और एक सामाजिक शोध हेतु अगणी केंद्र भी उपलब्ध कराता है। आरएलएस जर्मनी में छः राजनीतिक दलों से संबद्ध एक राजनीतिक प्रतिष्ठान है और यह ८० से अधिक देशों में अपने साझेदारों को, जो कि सामाजिक न्याय, सार्वजनिक भागीदारी को मजबूत करने एवं सामाजिक - पर्यावरणीय विकास को मजबूत करने में जुटे हैं, की मदद करता है।

अनुदेशकों के संबंध में

रांजा सेनगुप्ता

रांजा सेनगुप्ता एक वरिष्ठ अर्थशास्त्री हैं और वर्तमान में थर्ड वर्ल्ड नेटवर्क के भारत कार्यालय की प्रमुख हैं। वे जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय की विद्यार्थी रहीं हैं और उनके कार्य (अध्ययन) का विस्तार कृषि संस्थानों, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और निवेश नीति निर्माण, वैश्वीकरण, गरीबी और असमानता तक है। वर्तमान में वे वैश्विक व्यापार एवं निवेश नीतियों जिन्हें कि विश्व व्यापार संगठन एवं मुक्त व्यापार अनुबंधों (एफटीए) के माध्यम से बढ़ा गया है और उनके वैश्विक दक्षिण की विकास प्राथमिकताओं पर प्रभाव, जिनमें कि कृषि और भोजन का अधिकार, मानव विकास, रोजगार एवं आजीविका और अनिवार्य सेवाओं तक पहुंच शामिल हैं, पर कार्य कर रहीं हैं। वे विकास के लिए वित्त (फाइनेंसिंग फॉर डेवलपमेंट एवं २०३० कार्यसूची एजेंडा) एसडीजी (सतत विकास लक्ष्य) बातचीत पर उनकी शुरुआत से निगाह रखे हुए हैं और उन्हें विशेष रूप से उनके क्रियान्वयन के मुद्दों के नजरिए से देख रहीं हैं और इसके संदर्भ में अपना विशेष ध्यान अंतर्राष्ट्रीय व्यापार नीतियों और विकास लक्ष्यों पर बनाए हुए हैं।

शालिनी भुटानी

शालिनी भुटानी एक स्वतंत्र न्यायिक शोधकर्ता एवं नीति विश्लेषक हैं। वे दिल्ली में रहती हैं। उन्होंने मुक्त व्यापार समझौतों के प्रभाव का विस्तृत अध्ययन किया है। उन्होंने इस बात की पड़ताल की है कि किस प्रकार व्यापार के नियम एशियाई क्षेत्रों में कृषि एवं जैवविविधता, दोनों को प्रभावित करते हैं। उन्हें मुक्त व्यापार समझौतों के खिलाफ फोरम (फोरम अगेस्ट फ्री ट्रेड एग्रीमेंट्स) जो कि भारतीय सिविल सोसाइटी संगठनों, ट्रेड यूनियनों, एवं जन आंदोलनों का एक समूह है जो कि एकसाथ मिलकर मुक्त व्यापार समझौतों पर जनता की चिंता पर प्रकाश डालते हैं के साथ सहयोग के लिए विशेष रूप से जाना जाता है।

बिस्वजीत

धर

बिस्वजीत धर भारत स्थित जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, में सेंटर फार इकॉनामिक स्टडीज एवं प्लानिंग (आर्थिक शिक्षण एवं नीति नियमन केंद्र) में प्रोफेसर हैं। इससे पहले वे पांच वर्षों तक नई दिल्ली में विकासशील देशों के शोध एवं सूचना प्रणाली के निदेशक जनरल थे और साथ ही भारतीय विदेश व्यापार संस्थान, नई दिल्ली में विश्व व्यापार संगठन (डब्लू टी ओ) अध्ययन केंद्र के प्रमुख भी रहे हैं। वे व्यापार नीतियों संबंधी मुद्दों, खासकर बहुपक्षीय व्यापार प्रणाली के संदर्भ में भारत सरकार के साथ शोधकर्ता एवं नीति सलाहकार दोनों ही रूप में भी जुड़े रहे हैं। वे अनेक बार विश्व व्यापार संगठन में हुई मंत्रीस्तरीय बैठकों में भारतीय प्रतिनिधि मंडल के सदस्य भी रहे हैं। वे सांख्यिकी मंत्रालय, रसायन एवं उर्वरक मंत्रालय एवं पर्यावरण एवं वन मंत्रालय द्वारा गठित विशेषज्ञ समूहों में भी रह चुके हैं। धर वैश्विक व्यापार प्रणाली के कार्यकलापों से संबंधित विषयों को लेकर अनेक अंतरसरकार संगठनों जैसे यूएनडीपी (UNDP) यूएनईएससीएपी (UNESCAP), एफएओ (FAO) और अंकटाड (UNCTAD) के साथ व्यापक रूप से कार्य कर चुके हैं।

डी.रवि

कांत

रवि कांत एक स्तंभकार हैं और साथ ही साथ वे वैश्विक व्यापार के मुद्दों पर टिप्पणीकार भी हैं। उन्होंने सन् १९८६ से प्रेस ट्रस्ट आफ इंडिया (पीटीआई) के अलावा नई दिल्ली में इंडियन पोस्ट, इंडिपेंडेंट, दि इकॉनामिक टाइम्स और बिजनेस स्टैंडर्ड के लिए कार्य किया है। उन्होंने उरुग्वे दौर की बातचीत को लेकर दि इकॉनामिक टाइम्स, बिजनेस स्टैंडर्ड, एशिया टाइम्स और बीएनए में विस्तार से लिखा है और कई महत्वपूर्ण रहस्योद्घाटन करती रिपोर्ट भी लिखी हैं। उन्होंने मारकेश मंत्रीस्तरीय बैठक को भी कवर किया है जिसने कि सन् १९९४ में डब्लू टी ओ (विश्व व्यापार संगठन) को स्थापित किया था। उन्होंने डेक्कन हेराल्ड (बेंगलुरु), दि वर्ल्ड ट्रेड एजेंडा (जेनेवा), दि इकॉनामिक एण्ड पोलिटिकल वीकली (ई पी डब्लू), बिजनेस स्टैंडर्ड (भारत), मिंट (भारत) और एस यू एन एस (जेनेवा) के लिए डब्लू टी ओ को लेकर विभिन्न रिपोर्ट्स की हैं और संपादकीय पृष्ठों पर लेख लिखे हैं। उनकी वाशिंगटन ट्रेड डेली में की गई रिपोर्टिंग सन् २००० से डब्लू टी ओ के प्रतिनिधियों की बंद दरवाजों के पीछे होने वाली बैठकों में घटित होने वाली घटनाओं की जानकारी बाहर लाने का स्रोत रही है।

संपादकीय टिप्पणी

विश्व भर में आर्थिक गतिविधियों के बढ़ते एकीकरण के चलते अंतर्राष्ट्रीय व्यापार अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक अर्थव्यवस्थाओं और विकासात्मक पद्धतियों के पर्यवेक्षकों के लिए एक रुचिकर कार्यक्षेत्र बन गया है। परंतु जब हम डब्लू टी ओ की गतिशीलता, आंचलिक मुक्त व्यापार समझौते और उसके बाद द्विपक्षीय व्यापार समझौते और निवेश संधियों को देखते हैं तो सामने यह चुनौती आती है कि वैश्विक व्यापार परिदृश्य बेहद अव्यवस्थित है और यह तब और सघन (गहरी) हो जाती है जब हम इन मुद्दों के गठजोड़ों को समझने का प्रयास करते हैं। परंतु देश के नागरिकों खासकर नागरिक समाज और मीडिया के लिए यह अनिवार्य सा है कि उन्हें अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की मूलभूत रूपरेखा और सिद्धांतों (इसमें सांस्थानिक दृष्टिकोण (परिप्रेक्ष्य) व द्विपक्षीय समझौतों के परिप्रेक्ष्य दोनों की पहुंच से) की अच्छी समझ होना चाहिए जिससे कि वे विभिन्न नीतिगत निर्णयों और व्यापार से संबंधित बातचीत पर सरकार द्वारा की गई कार्यवाहियों का आलोचनात्मक आकलन कर सकें और उस पर टिप्पणी भी कर सकें।

व्यापक परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखते हुए, जिसमें कि आसन्न बारहवां डब्लू टी ओ मंत्रीस्तरीय सम्मेलन और भारत के मुक्त व्यापार समझौतों को लेकर बढ़ते अनुबंध और व्यापार संबंधित विषयों पर जनशिक्षण में मदद हेतु सेंटर फार फाइनेंसियल अकाउंटेबिलिटी ने फोकस आन ग्लोबल साउथ और फोरम फॉर ट्रेड जस्टिस के संयुक्त तत्वावधान में रोजा लक्समबर्ग स्टिफ्टिंग की मदद से “विश्व व्यापार संगठन और मुक्त व्यापार समझौतों का खुलासा” विषय पर दो दिवसीय क्षमता निर्माण कार्यशाला का आयोजन किया। यह कार्यशाला आभासी (आनलाइन) तौर पर नवंबर २०२१ में संपन्न हुई। वैसे कार्यशाला के दौरान ही विश्व व्यापार संगठन ने जेनेवा में होने वाली अपने बारहवीं मंत्रीस्तरीय सम्मेलन को अनिश्चित काल तक के लिए स्थगित कर दिया। यह निर्णय कोविड - १९ के नए स्वरूप के फैलने के आलोक में लिया गया था।

बारहवां मंत्रीस्तरीय सम्मेलन संभवतः अब जून - २०२२ में होगा और उम्मीद है कि यह बेहद राजनीतिक मसला बन सकता है। एक ओर डब्लू टी ओ के समर्थक तिहरी विकास विरोधी रणनीति जिसमें वाकर रणनीति, मछली पालन, बहुपक्षीय सब्सिडी को लेकर नई नीति और बहुपक्षीय “संयुक्त वक्तव्य पहल” को आगे बढ़ाने की बात कर रहे हैं और साथ ही साथ विश्व व्यापार संगठन में विकास की नई प्रक्रिया को थोपने पर भी जोर दे रहे हैं। वहीं दूसरी ओर विकासशील देश विश्व व्यापार संगठन से अपने एजेंडे (कार्यसूची) से पीछे हटने की मांग कर रहे हैं और वे चाहते हैं कि डब्लूटीओ इसके बजाय महामारी खत्म करने को लेकर ट्रिप्स को हटाए। इसके अलावा मछली पालन संबंधी बातचीत के साथ ही साथ विश्व व्यापार संगठन संपूर्णतया अपने यहां से संरक्षण और विस्तार संबंधी भेदभावपूर्ण व्यवहार को खत्म करे और विश्व व्यापार संगठन खाद्यसुरक्षा को लेकर सार्वजनिक भंडारण की सीमा संबंधी रोकटोक का कोई स्थायी समाधान खोजे। इस ट्रांसक्रिप्शन पुस्तिका के माध्यम से आयोजकों ने प्रयास किया है कि नवंबर २०२१ में आयोजित कार्यशाला, जिसका उद्देश्य लोग डब्लू टी ओ और एफ आई ए से संबंधित सामग्री को आसानी से पढ़ व समझ सकें। लोग कार्यशाला की सामग्री को साझा कर सकें, विमर्श कर पाएं और कार्यशाला की विवेचना अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचा सके। इस पठन सामग्री में शामिल हैं वार्ताओं की ट्रांसक्रिप्शन, वैश्विक व्यापार व्यवस्था (डब्लू टी ओ, एफटीए आदि) का रहस्योद्घाटन, अभिसरण (कनवरजेंस) की पहचान, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के कुछ क्षेत्रों का विश्लेषण, मछली पालन एवं कृषि क्षेत्र, ट्रांसक्रिप्ट को बहुत ही ध्यानपूर्वक संपादित किया गया है जिसमें कि वक्ताओं के तर्क यथावत कायम रहें। ट्रांसक्रिप्ट के संपादित संस्करणों में कार्यशाला के दौरान सामने आए कुछ महत्वपूर्ण संदर्भों को भी शामिल किया गया है। यह पुस्तिका बमदण्डितह पर हिन्दी में भी उपलब्ध है।

दिसंबर - 2021

विश्व व्यापार संगठन और
वैश्विक व्यापार व्यवस्था का रहस्योद्घाटन

रांजा सेनगुप्ता →

यहां बहुत अच्छा महसूस हो रहा है। इस वर्ष बारहवें मंत्रीस्तरीय सम्मेलन¹ को लेकर बहुत उत्तेजना है। यह कहना अनावश्यक सा है कि यह सर्वाधिक राजनीतिक और सबसे कठिन (सम्मेलन) है, जिसमें कि अत्यन्त विवादास्पद मुद्दों को लाया जाएगा। विकासशील देशों के ऐसे कई मुद्दे हैं जो कि ऐतिहासिक तौर पर उनके हित के हैं, लेकिन अबतक इन मुद्दों का समाधान नहीं किया गया और इसके बजाए विकसित देश विभिन्न आड़े-तेड़े रास्तों से विकासशील देशों पर उदारवाद को और भी ज्यादा थोप रहे हैं। मैं इस मुद्दे पर अंत में आऊंगा। सर्वप्रथम मैं यह बताकर शुरू करना चाहता हूँ कि यह व्यापार और निवेश समझौते किस तरह तैयार किए जाते हैं।

विश्व व्यापार संगठन सन् १९९५ से अस्तित्व में आया और तभी से हम ढेर सारे द्विपक्षीय या आंचलिक मुक्त व्यापार समझौतों की मेहमाननवाजी कर रहे हैं। हम सबको उम्मीद थी कि इन सबको एकसाथ रखकर विकासशील देश अधिक सक्षम होंगे, वैश्वीकरण के पूरे विचार के पीछे के विचार को आगे ले जाने में अधिक सक्षम होंगे और सर्वाधिक सक्षम निर्माता उत्पादन करेंगे जिससे कि दुनियाभर के उपभोक्ता सबसे कम मूल्य पर उत्पाद प्राप्त कर पाएंगे और इससे उन्हें लाभ प्राप्त होगा। परंतु वास्तविकता इससे बहुत अलग है और हमने (भारत) जिस तरह से ये व्यापार सौदे (समझौते) दोनों ही यानी विश्व व्यापार संगठन व मुक्त व्यापार समझौते के अंतर्गत किए हैं ये हमारी विकास की जरूरतों को पूरा कर पाने में अधिकांशतः असमर्थ सिद्ध हुए हैं। वर्षों से हम अपनी जरूरतें फिर वह चाहे सार्वजनिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में हों या खाद्यसुरक्षा और सार्वभौमिकता, या आजीविका के या संसाधनों के प्रति पहुंच की हों, की पूर्ति नहीं कर पा रहे हैं और संकट (महामारी का विशाल आकार) आने के बाद अब हमें भान हो रहा है कि हम अपनी जरूरत का कुछ भी उत्पादित नहीं कर सकते हैं। इसका एक बहुत छोटा सा उदाहरण है, विकासशील और कम विकसित देशों द्वारा वेक्सीन निर्माण के संबंध में पेश आ रही समस्याएं। गौरतलब है ऐसा तब हुआ जबकि उनके पास इसके उत्पादन की क्षमता तो है लेकिन उनके पास इसकी तकनीक नहीं है क्योंकि इन व्यापार समझौतों के माध्यम से इसे बाधित कर दिया गया है। आज की तारीख में केवल चार देशों का स्वास्थ्य उत्पादों में प्रभुत्व है।

फिर वह चाहे पीपीई किट हों, मास्क हो, वेक्सीन हो या वेंटीलेटर। परंतु डब्लूटीओ गठन के समय दिए गए तर्क के हिसाब से ऐसा नहीं होना चाहिए था। ऐसा पहले भी हो चुका है।

सन् २००८ में आए खाद्यसंकट के दौरान कुछ ही देश खाद्य पदार्थों का उत्पादन करने में सक्षम थे, और उन्होंने अपने निर्यातों को सीमित कर लिया था। ठीक इसी तरह के व्यापार समझौतों की वजह से अनेक देश आत्मनिर्भरता प्राप्त करने से बहुत दूर रह गए। उदाहरण के लिए भारत ने अपनी ओर से निर्यात को सीमित किया, यह कमोवेश ठीक था, क्योंकि या तो हम अपनी घरेलू आबादी को खिला सकते थे या निर्यात कर सकते थे। अंततः इस सबसे यह सिद्ध हो गया कि इन व्यापार समझौतों ने हमें कभी भी आत्मनिर्भर नहीं बनने दिया। इतना ही नहीं इन व्यापार समझौतों ने हमसे हमारा नीतिगत आधार भी छीन लिया है। इसका एक अच्छा उदाहरण यह है कि सरकार महामारी से संबंधित झटकों से वापसी हेतु कोविड को लेकर ठोस कदम उठाना चाहती है लेकिन व्यापार समझौतों ने वास्तव में हमारे हाथ बांध दिए हैं। इस पूरी स्थिति ने हमें यह सवाल पूछने पर मजबूर कर दिया है कि एक वैश्विक विध्वंस (विप्लव) का प्रभाव कथित “समान” व्यापार साझेदारों पर इतना असमान क्यों पड़ा ? पूरा मुद्दा बेहद सूक्ष्म अंतर वाला है और मैं कुछ हद तक यहां इसको समझाने का प्रयास करूंगा। नीचे विश्व व्यापार संगठन के आधारभूत ढांचे और जब यह आरंभ हुआ था तब के अवयवों का संक्षिप्त विवरण है :-

- कृषि पर समझौता (AOA)
- गैर कृषि बाजार तक पहुंच (NAMA)
- सेवाओं पर सामान्य समझौता (GATS)
- व्यापार संबंधी बौद्धिक संपदा (TRIPS)
- व्यापार संबंधी निवेश मानदंड (TRIMS)
- अन्य मानक और सुरक्षा, कपड़ा, एंटी डॉपिंग सब्सिडी, एनबीटी, विवाद समाधान, व्यापार संबंधित मदद, आदि

कृषि संबंधित समझौता (iv), जो कि कृषि नियमों के बारे में है) और गैर कृषि बाजार तक पहुंच (छाडा, जो कि औद्योगिक उत्पादों से संबंधित है) ऐसे समझौते हैं जिनका मुख्य निशाना आयात शुल्क और सब्सिडीज पर ही है। उदाहरणार्थ, भारत में एक संवेदनशील कृषि क्षेत्र मौजूद है और साथ ही साथ यहां नए उद्योगों की भी महत्वपूर्ण उपस्थिति है और इन क्षेत्रों की सुरक्षा के लिए आवश्यक है कि आयात शुल्क लगाया जाए और सब्सिडी दी जाए। गौरतलब है जब विकसित देश औद्योगिककरण के माध्यम से विकसित हो रहे थे तब अन्य चीजों के अलावा उन्हें उच्च आयात शुल्क और सब्सिडी की मदद मिली थी और उन्होंने सफलतापूर्वक विकास के उस तल को पार कर लिया था। जबकि अब उस संदर्भ की अवहेलना कर भारत जैसे विकासशील देशों को शुल्क व सब्सिडी देने की अनुमति नहीं दी जा रही है। विश्व व्यापार संगठन की शुरुआत से ही कृषि पर समझौता (iv) बेहद तिरस्कारपूर्ण रहा है, क्योंकि विकसित देशों ने अतीत में बड़ी मात्रा में सब्सिडी दी है। जबकि, गेट्स या सेवा समझौता विश्व व्यापार संगठन में बहुत आगे नहीं बढ़ पाया।

ट्रिप्स समझौता ऐतिहासिक दृष्टिकोण से और महामारी से उभरी अव्यवस्थाओं के कारण काफी प्रकाश में रहा। इस समझौते ने तथाकथित “प्रवर्तकों” और जिनके पास तकनीक है, के लिए पेटेंट के माध्यम से एकाधिकार (मोनोपाली) सृजित की। बड़ी आसानी से यह भुला दिया गया कि मॉडेर्ना हो या एस्ट्राझेनेका या फाइजर, उनकी सफलता में बड़ी मात्रा में सार्वजनिक धन लगा है और अंत में तकनीक पर उनके एकाधिकार को मान्यता दे दी गई। परंतु ट्रिप्स समझौते ने विश्व की सरकारों के लिए यह अनिवार्य कर दिया कि वे इन एकाधिकारों को न्यायिक मान्यता दें, पेटेंट अधिकार प्रदान करें और प्रवर्तक कंपनी को अन्य तरह के कापीराइट भी दें। इसका यह अर्थ भी निकलता है कि इन कंपनियों का अब उत्पादन ही नहीं बल्कि मूल्य निर्धारण पर भी एकाधिकारी नियंत्रण होगा। यदि संक्षेप में कहें तो इस मोर्चे पर सभी समस्याओं की जड़ यही है।

व्यापार संबंधी बौद्धिक संपदा अधिकारों के मुद्दे

चूंकि ट्रिप्स समझौते ने विशिष्ट निगमों (कारपोरेशंस) को एकाधिकार दे दिए हैं, ऐसी स्थिति में हम देख रहे हैं कि वैश्विक तौर पर दवाओं की कीमतों में वृद्धि हुई है और इस वजह से दवाइयों की पहुंच भी बेतरह बाधित हुई है व जोखिम भी बढ़ा है। भारत और थाईलैंड जैसे देश और कई अन्य देश और कुछ अफ्रीकी देश, जिन्हें हम जेनेरिक औषधि कहते हैं का उत्पादन कर रहे हैं। परंतु हम देख रहे हैं कि विकसित देशों में स्थित यह बड़ी दवा कंपनियां (जो कि अमेरिका, यूरोपियन यूनियन व अन्य स्थानों पर स्थित है) अपनी सरकारों पर जोर डाल रहीं हैं कि वे उनके पेटेंट अधिकारों को मान्यता दें। इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है कि कोविड वेक्सीन को लेकर एकाधिकारी नियमों का इन निगमों द्वारा किए गए प्रयोग से सामने आया विध्वंस। हमने देखा है कि यह एक बड़ी चुनौती है और मैं इस पर बाद में लौटूंगा। परंतु अब जो सामने आया है वह बेहद मजेदार है। साफ-साफ कहूँ तो इस संपूर्ण बौद्धिक संपदा विमर्श का विश्व व्यापार संगठन से कोई लेना-देना ही नहीं है। इसे तो वस्तु व सेवाओं के आदान प्रदान को लेकर किया गया एक व्यापार समझौता कर माना जा सकता है। ट्रिप्स समझौते को आईबीएम, फाइजर और इसी की तुलना के अमेरिकी, यूरोपीय यूनियन, जापान आदि के समूहों ने अपनी सरकारों के साथ मिली भगत (लॉबियिंग) कर आभासी रूप से लिखा है। और फाइजर ने तो खुलकर कहा भी है कि, “हमारी संयुक्त ताकत ने हमें एक वैश्विक निजी क्षेत्र का सरकारी नेटवर्क स्थापित करने हेतु सक्षम किया है और इसी ने ट्रिप्स की स्थापना की जमीन भी तैयार की है।” तो अपने हित, अपने एकाधिकार के संरक्षण के लिए उन्होंने ट्रिप्स समझौते को विश्व व्यापार संगठन में प्रविष्ट कराया। परंतु पूछने वाली एक मजेदार बात यह भी है कि विकासशील देशों ने इस पर हस्ताक्षर क्यों किए ? मेरे कहने का अर्थ है कि विकासशील देश बौद्धिक संपदा के न तो विशुद्ध उपभोक्ता हैं, न ही इसके स्वामी हैं और निर्यातक हैं। तो उन्होंने (विकासशील देश) इस अनुचित समझौते पर न केवल हस्ताक्षर किए और अब भी उससे लटके पड़े हैं ?



सर्वप्रथम विश्व व्यापार संगठन ने प्रस्ताव किया और हमें लगातार (विकासशील विश्व) कागजों पर सर्वाधिक पसंदीदा राष्ट्र (मोस्ट फेवर्ड नेशन MFN) का प्रस्ताव देता रहा। जबकि वास्तविकता यह है कि ट्रम्प व्यवस्था के अन्तर्गत कभी इसका पालन नहीं किया गया और यह इससे भी स्पष्ट है कि इन सर्वाधिक पसंदीदा राष्ट्रों के निर्यात तक को बाधित किया गया है। याद रखिए जब बातचीत होती है, तब प्रत्येक देश का एक मत (वोट) होता है। बातचीत के दौरान विकासशील देशों और खासकर कम विकसित देशों (LDC) पर अत्यधिक दबाव होता है कि वे उसी दस्तावेज पर हस्ताक्षर करें जो अमीर देश चाहते हैं। ऐसे लोग विश्व व्यापार संगठन के समझौतों पर निगाह रखते हैं, जानते हैं कि ये लेनदेन कितने जबरदस्त राजनीतिक हो गए हैं। तो, भले ही सर्वाधिक पसंदीदा राष्ट्र का स्तर दस्तावेजों और सिद्धांत में उचित लगता है, लेकिन वास्तव में यह उस तरह से प्रचलन में नहीं है।

दूसरा यह कि, विकासशील देशों से कहा गया था कि कृषि उत्पादन और कपड़े के लेन देन के एवज में उनकी पहुंच अमीर देशों के बाजारों में होगी। साथ ही उनसे वायदा किया गया था कि वे अपने देश में सब्सिडी व्यवस्था को अनुशासित करेंगे। परंतु २७ साल बीत जाने के बावजूद हम यह देखते हैं कि इसका क्रियान्वयन नहीं हुआ क्योंकि अमीर देशों में सब्सिडी और आयात निर्यात शुल्क बाधाएं (गैर टेरिफ) की उपस्थिति लगातार जारी है।

तीसरा यह कि, अमेरिका अपने घरेलू कानून की धारा ३०१^२ का प्रयोग करता चला आ रहा है। इसका अर्थ है अमेरिकी व्यापार मंत्रालय धारा ३०१ के माध्यम से अमेरिकी कंपनियों का संरक्षण कर रहा है और यदि वे देखते हैं कि उनके हितों को चोट पहुंच रही है, तो उसके बाद वे वास्तव में एकतरफा निर्णय ले लेता है। इन्हीं कारणों के चलते ट्रिप्स समझौता उन्हें निश्चित लचीलापन भी उपलब्ध कराता है। अतएव ट्रिप्स पर विकासशील व निम्न विकसित देशों ने जिन कारणों से हस्ताक्षर किए थे, वे उन्हें प्राप्त नहीं हो पाए और दोनों ही परिस्थितियों यानी ट्रिप्स एकाधिकार की स्थापना और बढ़ती कीमतों के चलते कुल मिलाकर उन्हें दवाइयों, वेक्सीन व स्वास्थ्य सेवाओं पर अपनी पहुंच को लेकर मनमारकर समझौता करना पड़ा और कृषि पर समझौते पर उनकी हार हुई।

8

सार्वजनिक स्वास्थ्य जैसे प्रमुख क्षेत्र की चिंताओं को आगे ले जाते हुए, सन् २००१ में सार्वजनिक स्वास्थ्य को लेकर दोहा घोषणापत्र पर हस्ताक्षर हुए। वहां पर ट्रिप्स समझौते को पुनः सुनिश्चित किया गया था, लेकिन इसमें कुछ लचीलापन भी था। वह लचीलापन था कि, सर्वप्रथम यदि सरकार महसूस करती है कि कोई खास दवाई या प्रिसक्रिपशन बहुत महत्वपूर्ण है लेकिन पेटेंट एकाधिकार की वजह से बहुत अधिक कीमत का है तो वह कम्पलसरी लाइसेंस (अनिवार्य लाइसेंस) जारी कर सकती है। तदुपरांत वे अन्य कंपनियों से (उन्हें लाइसेंस देकर) उसका उत्पादन करवा सकते हैं। रुचिकर है कि सन् २०१२ में नेटको फार्मा को भारत में पहली बार अनिवार्य लाइसेंस बायर की नेक्सावर, जो कि लिवर व किडनी कैंसर की दवाई है के जेनेरिक स्वरूप के उत्पादन के लिए जारी किया गया। अमेरिका ने इस कदम को धारा ३०१ के अन्तर्गत चुनौती दे दी। ऐसा अन्य अनेक देशों में भी हुआ जहां पर कि कानूनी तौर पर अनिवार्य लाइसेंसिंग उपलब्ध करवाया गया था।

कृषि पर समझौता (AOA) पर भी हमें (भारत एवं अन्य विकासशील देश और कम विकसित देश) जबरदस्त हानि उठानी पड़ी है। उदाहरण के लिए, यूरोपीय संघ के सब्सिडी युक्त चावल के प्रवेश से फिलिपींस के समृद्ध अंचलों में से किसानों की टुकाई हो गई। अब वे (विकसित देश) मुक्त व्यापार समझौतों का भी इस्तेमाल करके शुल्क ही हटा रहे हैं और हमारे देशों में प्रवेश कर रहे हैं। शालिनी इस पर व्यापक प्रकाश डालेंगी। आयात शुल्क को एकबार हटा दिए जाने के बाद हमारे यहां अमेरिका और यूरोपीय संघ से सब्सिडी प्राप्त उत्पादों के आवक की बाढ़ आ जाएगी। और यदि ऐसा एकबार हो गया तो यह तय है कि आयात शुल्क के नाम पर जो एकमात्र संरक्षण (क्योंकि न तो हम अत्यधिक सब्सिडी दे सकते हैं और न ही हम स्तर बढ़ा सकते हैं।) भी हमारे हाथ से चला जाएगा। क्योंकि सब्सिडी और मानक (स्टैंडर्ड) ही वे रास्ते हैं जिसके माध्यम से अमीर देश अपने कृषि व्यापार और औद्योगिक मछली पालन (मछुआरों) का संरक्षण करते रहे हैं।

वर्तमान में ट्रिप्स समझौता

जमीनी असमानताओं की वजह से सीमांत समूहों, गरीबों, महिलाओं और ग्रामीण जनसंख्या पर अनुचित व्यापार के अत्यधिक प्रतिकूल प्रभाव पड़ते हैं। ऐसे समूह या वर्ग जहां पर कि स्वास्थ्य सेवाएं पहले से ही कम हैं और वहां यह और भी कम हो जाती हैं क्योंकि सुविधाएं अधिक महंगी (उदाहरणार्थ एचआईवी - एड्स की दवाइयां और उपचार पर बढ़ता खर्च) हो जाती हैं। भारत और दक्षिण अफ्रीका द्वारा कोविड से संबंधित तकनीक को लेकर ट्रिप्स समझौते में निहित बाध्यता हेतु अब ६६ सह प्रायोजकों का सहयोग मिल गया है और इसका १०० देशों ने समर्थन किया है। बेहद आश्चर्यजनक कदम उठाते हुए अमेरिका ने इस छूट का सीमित स्तर पर समर्थन किया है। लोगों का कहना है कि ऐसा इसलिए क्योंकि अमेरिका को यह ज्ञात हो गया है कि उसके अपने स्वयं के वेक्सीन निर्माताओं के समक्ष पेटेंट व्यवस्था को लेकर भी समस्याएं हैं। इस प्रस्ताव से उत्पादन व इसकी पहुंच में वृद्धि हो सकती है, लेकिन कुछ देश जिसमें यूरोपीय संघ (जर्मनी), स्विट्जरलैंड और ब्रिटेन शामिल हैं, इसमें बाधा डाल रहे हैं। ओटावा समूह व्यापार एवं स्वास्थ्य पहल (ओटावा ग्रुप्स ट्रेड एण्ड हेल्थ इनिशिएटिव) वास्तव में और अधिक उदारीकरण की मांग कर रहा है और यह भी कि (विकासशील) देश आयात शुल्क में कमी लाएं और निर्यात पर बंधन न लगाएं, ई-कामर्स का इस्तेमाल करें और व्यापार सहूलियतों का प्रयोग करें। ये सभी विकासशील देशों के लिए बेहद समस्याग्रस्त मुद्दे हैं। क्या आप कल्पना कर सकते हैं कि यह सब तब हो रहा है जबकि हम सब पर एक ऐसा संकट में है जिसमें हम सभी गंभीर परिस्थितियों से जूझ रहे हैं। इस दौरान विकासशील देशों को विकसित देशों की बनिस्वत अधिक चोट पहुंची है क्योंकि हमारे पास तो संसाधन ही नहीं हैं। इससे मुकाबला करने के लिए हमारे पास न तो स्वास्थ्य का आधारभूत ढांचा है और न ही दवाइयों तक हमारी पहुंच ही है।

अमीर देश अब इसका इस्तेमाल बहुत ही खतरनाक प्रावधानों को आगे बढ़ाने के लिए कर रहे हैं और अब यह विश्व व्यापार संगठन वाकर प्रक्रिया पर के माध्यम से हो रहा है। (वॉकर प्रक्रिया इसे न्यूजीलैंड के राजदूत वॉकर के नाम पर रखा गया है।) थर्ड वर्ल्ड नेटवर्क के माध्यम से हमने जेनेवा में बातचीत में मदद की बहुत अधिक कोशिश की, जिससे कि विश्व व्यापार संगठन में महामारी प्रतिक्रिया अच्छी

तरह से निर्मित हो सके। परंतु राजदूत वॉकर ने ट्रिप्स और आई पी को हटाने से कठोरता से इंकार कर दिया। विकासशील देशों का कहना था कि यदि आप महामारी पर कोई प्रतिक्रिया देना चाहते हैं तो आप सबसे पहले अधित्याग (वेवर) के मुद्दे को सुलझाएं। परंतु उन्होंने (अमीर देश) इसे रहस्यमय बनाते हुए कहा कि अधित्याग को लेकर कहीं और चर्चा हो चुकी है और उन्होंने इसके बजाए इस पूरे मामले से बाहर निकलने के लिए तीसरा रास्ता दिखा दिया। अर्थात् तकनीक के हस्तांतरण के बजाए निर्माण के मुद्दों पर ध्यान बटा दिया और यूरोपीय संघ ने अधित्याग को लेकर एक वैकल्पिक प्रस्ताव यानी ट्रिप्स को लेकर लचीलापन को लागू करने का प्रस्ताव सामने रख दिया। जिसे मैंने ऊपर समझाया भी था, का ठीक से क्रियान्वयन नहीं हो पाया।

विश्व व्यापार संगठन से खाद्य संप्रभुता को चुनौती

कागजों पर कृषि पर समझौता (AOA) तटस्थ नजर आता है लेकिन यह मुख्यतया विकसित देशों के सब्सिडाइज्ड उत्पादों को विकासशील देशों के बाजार में निर्यात हेतु सुविधाजनक बनाता है। हम यूरोपीय संघ व अमेरिका के जबरदस्त सब्सिडी प्राप्त उत्पादों जैसे डेरी, अनाज, प्रोसेस्ड खाद्य, कपास आदि की विशाल आमद देखते हैं और पाते हैं कि इनको काफी अच्छा स्थान मिल भी गया है। जब कृषि पर समझौता हुआ तो वे अपने लिए बड़ी छूटें प्राप्त करने में कामयाब हो गए। विकसित देशों ने अत्यधिक घरेलू सब्सिडी दी, एएमएस की अतिरिक्त पात्रता हासिल की और वायदे के अनुसार कटौती भी नहीं की, साथ ही बेहद रचनात्मकता से साथ ग्रीन बाक्स सब्सिडी (ऐसा माना जाता है कि ये वे सब्सिडी हैं जो व्यापार संबंधित शोध का स्वरूप नहीं बिगाड़तीं, आपदा का समाधान आदि) का प्रयोग व्यापार बिगाड़ने (विद्रूप करने) में मदद के लिए किया। इसके माध्यम से विकासशील देशों के छोटे उत्पादकों को कमोवेश बंधक बना लिया और स्थानीय उत्पादन, छोटी जोत की खेती, जैवविविधता, खाद्यसुरक्षा और विकासशील देशों की संप्रभुता के लिए चुनौती बन गए। इन्हीं खोजों को लेकर अंकटाड ने कुछ बेहद अच्छे दस्तावेज तैयार किए हैं। आप में से जो भी विश्व व्यापार संगठन की गतिविधियों पर ध्यान दे रहे होंगे वे इस बात को लेकर जागरूक ही होंगे कि विकासशील देशों ने एक प्रस्ताव दिया था जिसे



खाद्यसुरक्षा के लिए सार्वजनिक भंडारण (पब्लिक स्टॉक होल्डिंग फॉर फूड सिक्योरिटी) नाम दिया गया था। यह इसलिए लाया गया था कि भारत जैसे देश अपने किसानों को एमएसपी (न्यूनतम समर्थन मूल्य) देते हैं। विकसित देश एमएसपी को व्यापार बिगाड़ने के रूप में देखते हैं। परंतु वे सन् २०१२ से भारत, इंडोनेशिया, केन्या, मिस्त्र, ट्यूनिशिया और अनेक विकासशील देशों से कह रहे कि उन्होंने सब्सिडी के प्रावधान की स्वीकार्य १० प्रतिशत (उत्पादन के मूल्य) की सीमा को पार कर लिया है। ऐसे में विकासशील देशों ने यह कहते हुए यह प्रस्ताव रखा कि इस तरह के सार्वजनिक दस्तावेज सार्वजनिक खाद्य कार्यक्रम के लिए हैं और इसलिए आपको उपभोक्ता को सब्सिडी देना ही होगी।

परंतु जब तक आप उत्पादक को सब्सिडी नहीं देंगे और उत्पादन में मदद नहीं करेंगे, तो स्पष्ट है कि कोई सार्वजनिक वितरण प्रणाली तैयार हो ही नहीं सकती। तो इन सब पर हमला हो रहा था और तब विकासशील देशों ने सन् २०१३ बाली मंत्रीस्तरीय बैठक में इसके लिए संघर्ष किया, जहां पर हमें शांति धारा (पीस क्लाज) प्राप्त हुई। इसका अर्थ है हम ये सब्सिडी दे सकते हैं और कोई हम पर मुकदमा दायर नहीं कर सकता। परंतु इन सब्सिडी को अभी भी व्यापार बिगाड़ माना जा रहा है, और उन्होंने इसमें बेतहाशा शर्तें लाद दी हैं। साफ-साफ कहूँ तो कोई भी देश इसे इस्तेमाल नहीं कर सकता क्योंकि यह शर्तों से लदी हुई है और छिन्न भिन्न है। भारत ने इसके इस्तेमाल के लिए दो बार वाद दाखिल किया जिससे कि वह चावल के लिए इस पीस क्लाज (शांति धारा) का प्रयोग कर पाए लेकिन उसे व्यापक चुनौतियों का सामना करना पड़ा। बाली मंत्रीस्तरीय बैठकों ने सन् २०१७ तक इसे स्थायी समझौता बनाने की अनिवार्यता तय कर दी थी। अतएव यह बारहवां मंत्रीस्तरीय सम्मेलन विकासशील देशों के लिए और भी महत्वपूर्ण हो गया है, क्योंकि विकसित देश आज भी इसे रोकने का हरसंभव प्रयास कर रहे हैं।

विकासशील देशों के विमर्श का एक अन्य मुद्दा है एसएसएम या विशिष्ट सुरक्षा प्रणाली (स्पेशल सेफगार्ड मेकेनिज्म)। जिस तरह हम चाहते हैं कि पश्चिमी देश अपनी अनुचित सब्सिडी में कटौती करें जिसे उन्होंने एकतरह से हमारे ऊपर ही उंडेल दिया (ढोल दिया) है और इसके बावजूद हम पर इस मांग के साथ हमला किया जा रहा है कि हम विकास बाक्स सब्सिडी में कटौती करें। (इसका सीधा सा अर्थ है कम आमदनी व संसाधन वाले गरीब किसान पर विपरीत प्रभाव)

मछलीपालन सब्सिडी पर चर्चा

यह बातचीत सन् २०१७ से जारी है। एसडीजी (सतत् विकास लक्ष्य) १४.६ जिसमें कि समुद्री संरक्षण के उद्देश्य को अनिवार्य बताया गया है, को लेकर उन्होंने (विकसित देश) विश्व व्यापार संगठन से इसे अनुशासित करने को कहा। हालांकि यह तो सन् २००१ से ही डब्लू टी ओ में अनिवार्य बना हुआ है। परंतु किसी ने इस पर कार्यवाही नहीं की, तो एसडीजी के आने के बाद, यहां भी विकसित देशों ने इसकी जिम्मेदारी संभाल ली।

भारत एवं विकासशील देश अपने लिए विशेष एवं विभेदक (विशिष्ट) बर्ताव की बात कर रहे हैं। ऐसा इसलिए क्योंकि हमारा मछलीपालन अभी अविकसित है, और हमें अपने छोटे मछुआरों को मदद के लिए सब्सिडी दिए जाने की आवश्यकता है। परंतु इसमें भी छोटे मछुआरों की मदद कम करने को लेकर बड़ा दबाव है और इसे प्राप्त करने के लिए भौगोलिक एवं समय सीमा की बाध्यता रख दी गई है। सब्सिडी भी केवल ऐसे मछुआरे जो कि १२ (बारह) समुद्री मील के भीतर मछली मारते हैं, को ही उपलब्ध कराई जाए।

मछलीपालन के क्षेत्र में, चीन एक अपवाद है क्योंकि वह बड़े पैमाने पर मछली पकड़ता है, औद्योगिक तौर मछली पकड़ता है दूरस्थ क्षेत्रों में जाकर मछली पकड़ता है आदि। इससे उसका आकार बहुत अलग हो जाता है। भारत के संदर्भ में देखें तो मछलियों की मात्रा तो बहुत ज्यादा है, लेकिन दुखद बात यह है कि विश्व के २६ प्रतिशत मछुआरे भी यहीं बसते हैं। अतएव विशेष और विभेदक बर्ताव को लेकर जिस तरह की शर्तें हैं कि भारत उनसे लाभान्वित हो ही नहीं सकता और उसे निश्चित वर्षों तक इससे छूट प्राप्त करने के लिए संघर्ष करना ही होगा। भारत ने सुझाव दिया है कि विकासशील देशों को २५ वर्षों की छूट दी जाए। मुझे संदेह है कि यह बात किसी नतीजे तक पहुंचेगी। परंतु यूरोपीय संघ जैसे देश जो कि औद्योगिकृत ढंग से मछली पकड़ते हैं इस आधार पर स्वयं के लिए छूट प्राप्त करने में सफल हो गए, बशर्ते वे यह बता पाएं कि वे मछलियों का भंडार बनाए हुए हैं। तो इस तरह से उन्होंने स्वयं के लिए लचीलापन सुरक्षित कर लिया।



92वां मंत्रीस्तरीय विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) सम्मेलन

हम देख रहे हैं कि ट्रिप्स के मोर्चे पर हार के कगार पर है क्योंकि विकसित देश अड़े हुए हैं और इस पर निर्णय के बजाए डब्ल्यू टी ओ की महामारी प्रतिक्रिया (वाकर प्रोसेस - प्रक्रिया) को आधार प्रदान कर विकासशील देशों की आवाजों की अवहेलना कर आसानी से ट्रिप्स अधित्याग (वेवर) को नकारा जा रहा है। हम शायद कृषि पर स्थायी समाधान हासिल न कर पाएं, लेकिन हम मछलीपालन क्षेत्र में भी विशेष और विभेदक बर्ताव के मसले पर भी बुरी तरह हार जाएंगे। इस संदर्भ में भारत ने जो कुछ भी प्रस्तावित किया है वह सभी बाहर हो जाएगा। अंत में यही कि बारहवें मंत्रीस्तरीय सम्मेलन में परामर्श की प्रक्रिया लगातार भयानक होती जा रही है। महामारी प्रतिक्रिया और कृषि संबंधी सभी ग्रीन रूम परामर्श और मछली पालन में आफलाइन (प्रत्यक्ष) योगदान की अनुमति नहीं है। विकासशील देशों के प्रस्तावों की सीधे-सीधे अवहेलना की जा रही है और यह सबकुछ काफी अपारदर्शी और गैर भागीदारी ढंग से हो।



शालिनी भुटानी →

भारत एवं मुक्त व्यापार समझौते: एक लेखा जोखा

सभी को नमस्कार,
 मैं सन् १९६५ जो कि विश्व व्यापार संगठन का जन्मवर्ष है से कुछ पहले से अपनी कहानी कहना शुरू करना चाहती हूँ। सह प्रायोजकों ने मुझसे एक बात का अनुरोध किया है कि मैं इस पूरे व्यापार क्षेत्र (अखाड़े) में विकासशील और विकसित देशों के मध्य के विरोधाभासों (द्विभाजन) पर खासतौर से प्रकाश डालूँ। मैं यह भी समझती हूँ कि आप में से अनेक लोग रोजमर्रा की स्थिति में व्यापारिक नियमों और निवेश समझौतों से विषयक विषयों के संपर्क में नहीं आते हैं। परंतु मैं सोचती हूँ कि इस दो दिवसीय कार्यशाला का उद्देश्य विभिन्न व्यापार समझौतों और हमारी रोजमर्रा की जिंदगी के बीच के विभिन्न बिंदुओं को आपस में जोड़ना है, इसका विभिन्न क्षेत्रों पर क्या असर है, विश्व व्यापार संगठन और मुक्त व्यापार समझौतों की व्यापक सीमाओं के साथ ही साथ द्विपक्षीय निवेश संधियों (BITS) पर समझ बढ़ाना या इन्हें समझना भी है। अपने प्रस्तुतिकरण के माध्यम से मैं निम्न प्रश्नों में से कुछ के उत्तर दूंगी कि ये किस तरह हमारी रोजमर्रा की जिंदगी से जुड़ते हैं, फिर वह चाहे सार्वजनिक सेवाएं हों जिन पर हमारी निर्भरता होती है, या पानी तक हमारी पहुंच। सार्वजनिक स्वास्थ्य तक हमारी पहुंच व हमारी कृषि और खाद्य प्रणालियां किस तरह की हैं, किस प्रकार की बैंकिंग और वित्तीय सेवाओं तक हमारी पहुंच है, आदि। इस तरह से इसका वृहत्तर फैलाव है। इसके अलावा मैं सोचती हूँ कि यह अत्यधिक महत्वपूर्ण है कि हम इन व्यापार और निवेश समझौतों की प्रकृति व प्रवृत्ति को समझें कि वे ऐसी क्यों हैं और सरकारें इन कारपोरेशनों को व्यापार समझौतों को पर्दे क पीछे किस तरह का संरक्षण देने को तैयार बैठी रहती हैं। हम इस खेल के अलग-अलग हिस्सों को एकसाथ जोड़कर देख पाएं कि इनके किस तरह के प्रभाव सब पर पड़ रहे हैं।

अन्तर्निहित विरोधाभास

व्यापारिक प्रणाली इस बात पर निर्भर है कि विकसित व विकासशील दुनिया किस तरह एकदूसरे से व्यवहार (आदान प्रदान) कर सकें। परंतु मूलभूत तथ्य यह है कि ये (विकसित एवं विकासशील विश्व) दोनों अनिवार्यतः पृथक हैं और विकास की पूर्णतया भिन्न स्थिति में हैं।

अतः उनके साथ समानता का व्यवहार नहीं हो सकता। मैं सोचती हूँ कानून व न्याय का एक मूलभूत सिद्धांत यह है कि आप एक असमान साझेदार से समान व्यवहार नहीं कर सकते। यही ऐसा कुछ है जिस पर ध्यान से देखने की जरूरत है कि कैसे सबको एक ही स्तर पर लाने का प्रयास किया जाए (विश्व व्यापार संगठन का यह मूल प्रयास भी है)। सभी को एक ही मेज पर बातचीत के लिए बैठाया जाए और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार नियमों का ऐसा ढांचा तैयार किया जाए जो कि विकासशील देशों के साथ ही साथ निम्न विकसित देशों के लिए भी निष्पक्ष हो। जैसा कि आप जानते ही होंगे कि विश्व व्यापार संगठन में अभी १६४ देश आधिकारिक सदस्य हैं, इसके अलावा प्रेक्षक (आब्जर्वर) देश हैं जो कि डब्ल्यूटीओ में शामिल होने की प्रक्रिया में हैं, इनमें विकासशील देशों का बहुमत है। क्योंकि विकसित विश्व के पास आर्थिक ताकत और राजनीतिक ताकत (और विशेषतः वास्तविकता है कारपोरेट का एजेंडा और कारपोरेट का नियंत्रण) है, तो इस वजह से इनके हितों के कुछ प्रस्तावों पर दूसरों से ज्यादा ध्यान दिया जाता है। इन व्यापार समझौतों नियमों जिनमें कि विकासशील देशों के खिलाफ कार्य करना अन्तर्निहित ही है, के माध्यम से विकसित विश्व की इच्छाओं को आगे ले जाया जाता है। यह अन्तर्निहित पक्षपात ही इन मंत्रीस्तरीय सम्मेलनों और इनके बाहर हमारे संघर्ष का कारण बना है। विकासशील देशों के इन संघर्षों के चलते कारपोरेशन और विकसित देश उस गति से नहीं चल पा रहे हैं जिस गति से डब्ल्यू टी ओ में बातचीत हो रही है और साथ ही यह भी विचारणीय है कि यह प्रतिरोध किस हद तक वैश्विक व्यापार नियमों के अन्तर्गत नए विषय और प्रकरण ला पा रहा है। इस सबसे ऊपर यह है कि जो पारंपरिक मुद्दे व क्षेत्र कहलाते हैं वे भी विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) समझौतों में संबोधित हो रहे हैं। इस विस्तारवादी एजेंडे के चलते सरकारें अब विश्व व्यापार संगठन की परिधि के बाहर व्यापार और निवेश को लेकर अंतरसरकार संबंधों की ओर ताक रही हैं।

व्यापार नियमों के साथ जुड़ाव (अनुबंध) की शुरुआत

यह रुचिवार तथ्य है कि विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू टी ओ) तो सन् १९६५ में ही अस्तित्व में आया था। परंतु इसके पहले ही भारत ने इसके पूर्वज, शुल्क व व्यापार पर सामान्य समझौता (जनरल एग्रीमेंट आफ टेरिफ एण्ड ट्रेड (GATT) जो कि सन् १९४८ में गठित हुआ था, पर हस्ताक्षर कर दिए थे।

इस वर्ष पर गौर करना इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि भारत को सन् १९४७ में राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त हुई थी, और इसका यह अर्थ भी निकलता है कि तब तक भारत का संविधान भी नहीं बन पाया था और सन् १९४८ में हमने गेट (GATT) पर हस्ताक्षर कर दिए थे। इसके बाद सन् १९५० में हमारे पास भारत का संविधान आया। तो आप कह सकते हैं कि हमें राजनीतिक स्वतंत्रता तो मिल गई, लेकिन आर्थिक स्वतंत्रता के विषय में कहें तो किस तरह की घरेलू नीतियां नया गणतंत्र अपने लिए रचेगा उसे व्यापक तौर पर वैश्विक व्यापार समझौते ने निर्धारित किया और यह आज तक हमारे वार्तालाप का महत्वपूर्ण हिस्सा है। अतएव यह महत्वपूर्ण है कि इस जुड़ाव को भारत के संविधान में खोजें और इस प्रक्रिया पर प्रश्न करें। उन मुद्दों पर गौर करें कि किस तरह व्यापार संधियों पर बातचीत हुई और क्या वास्तव में इन्हें संवैधानिक तौर पर चुनौती दी जा सकती है यदि ये लोकतांत्रिक सिद्धांतों के साथ ही साथ हमारी नीति में निहित नीति निर्माण हेतु संघीय ढांचे, यानी दोनों की भावनाओं के खिलाफ हैं।

भारत एवं मुक्त व्यापार समझौते

- 1991 - नई औद्योगिक नीति एवं बी आई पी पी ए
- 1992 - विदेशी व्यापार अधिनियम, 1992
- 1995 - विश्व व्यापार संगठन (डब्लू टी ओ)
- 2005 - भारत सिंगापुर सी ई सी ए (CECA)
- 2009 - भारत आसियान टी आई जी (TIG)
- 2015 - भारत विदेश मंत्रालय
- दिसंबर, 2018 - नया माडल - BTIA CPTPP/TPP II
- मई, 2019 - AICFA
- नवंबर, 2019 - RECP - भारत ने स्वयं को अलग किया
- 2020 - कोविड - 19

सन् १९९१ का उल्लेख करना वास्तव में कथित आर्थिक सुधारों के मूल बिंदु की बात करना भी है। यही वह समय था जबकि भारत में नई औद्योगिक नीति की घोषणा भी हुई थी। इसी दौरान द्विपक्षीय निवेश संरक्षण एवं प्रोत्साहन समझौतों (बाईलेटरल इन्वेस्टमेंट एण्ड प्रमोशन एग्रीमेंट (BIPAS) ने आकार लेना प्रारंभ किया जो कि, पहली पीढ़ी के द्विपक्षीय निवेश समझौते थे, जिन्हें भारत सरकार ने तैयार किया था। इसे लेकर समाचारों में बहुत कुछ सामने नहीं आ रहा था। इस तरह के ८० से ज्यादा द्विपक्षीय समझौते और इसी के साथ ही साथ घरेलू स्तर पर औद्योगिक नीतियों में परिवर्तन किया गया और आर्थिक सुधारों को भी जारी कर दिया गया। सन् १९९२ में भारत की संसद ने विदेश व्यापार अधिनियम पारित कर दिया। यह ऐसा मुख्य घरेलू कानून था जिसके माध्यम से विदेश व्यापार के निदेशक जनरल और वाणिज्य एवं उद्योग मंत्रालय ने भारत के व्यापार, शुल्क नीति आदि से जुड़ाव की परिचालनीय प्रक्रियाएं तैयार कीं और उसके अन्तर्गत प्रत्येक पांच वर्षों में एक्जिम (Exim) आयात - निर्यात नीति अधिसूचित की जाती है। तो, प्रत्येक पांच वर्षों में हम व्यापार घाटे की परिस्थितियों पर निर्भरता के आधार पर इन संदर्भ बिंदुओं को पुनः जांचते हैं या यूँ कहें कि आप तय करते हैं कि किन वस्तुओं को नकारात्मक सूची या संवेदनशील सूची में डाला जाना है। (ये ऐसी वस्तुएं होती हैं जिन पर देश सीमा शुल्क (कस्टम ड्यूटी) आदि कम नहीं करना चाहते, इसके बाद इन्हें इस कानून के अन्तर्गत अधिसूचित किया जाता है। अतएव यह महत्वपूर्ण है कि हम प्रत्येक पांच वर्षों में घोषित होने वाले विदेश व्यापार अधिनियम और एक्जिम नीति दोनों में होने वाले संशोधनों पर निगाह बनाए रखें। संयोग से कोविड की वजह से २०१५ से २०२० अवधि तक की आयात निर्यात नीति (एक्जिम पालिसी) को सितंबर २०२१ तक बढ़ा दिया गया है और यही वह समय भी है जबकि अगले पांच वर्षों के लिए नई एक्जिम नीति की घोषणा भी होना है। अब सन् १९९५ पर आते हैं। यही विश्व व्यापार संगठन के उभार का समय भी था। इस रांजा पहले ही हम सबको बता चुके हैं। परंतु इसी दौरान, इसके बाहर भारत भी अपनी पहली पीढ़ी के मुक्त व्यापार समझौतों में शामिल हो रहा था। अब, मुझे लगता है कि हम सबको यह पहचानना बहुत जरूरी है विश्व व्यापार संगठन अपने आप में एक तरह का मुक्त व्यापार समझौता ही है।

विश्व व्यापार संगठन समझौते में विकास और विकासशील देशों के विकासात्मक हितों के बारे में बहुत कुछ लिखा गया है। विशेषकर, जिस तरह से विकासशील देशों एवं न्यून विकसित देशों के विशेष और विभेदक व्यवहार (बर्ताव) के संबंधी मूलभूत हितों को जिस तरह से रखा गया है और क्रियान्वित करने की सीमा को बढ़ाया गया है। विश्व व्यापार संगठन को विशेषतः समझौते के अनुपालन, तकनीकी सहायता प्राप्त करने को विश्व व्यापार संगठन व अन्य विकसित देशों से (अर्जित) एक अधिकार माना गया है, तथा यह भी महत्वपूर्ण है कि विकासशील देशों को यह सब अधिकार विश्व व्यापार संगठन के ढांचे के अन्तर्गत उपलब्ध कराए गए हैं। परंतु इस ढांचे के बाहर इन सभी मुद्दों पर विकसित विश्व का जबरदस्त प्रतिरोध सामने आया है। गौरतलब है हाल के समय में भारत सरकार ने एक मुद्दीम चलाई है जिसके अन्तर्गत विशेषकर दक्षिण-दक्षिण मुक्त व्यापार समझौतों और द्विपक्षीय आर्थिक संबंधों पर विस्तृत बातचीत शुरू की गई है।

इस तरह का पहला समझौता सन् १९६८ में भारत - श्रीलंका मुक्त व्यापार समझौता है। लेकिन भारत आसियान के साथ आर्थिक समझौतों पर निर्णायक बातचीत पर सन् २००३ में ही पहुंच पाया। सन् २००३ के इस समझौते को उस व्यापार एवं वस्तु समझौते का अग्रदूत माना जा सकता है, जो कि आसियान के साथ अंततः सन् २००६ में संभव हो पाया। परंतु जिसे भारत के पहले मुक्त व्यापार समझौते के रूप में माना जा सकता है उस पर भारत व सिंगापुर ने हस्ताक्षर किए थे, और इसे कांफ्रिमेंसिव इकॉनामिक कोआपरेशन एग्रीमेंट (CECA, व्यापक आर्थिक सहयोग समझौता) कहा जाता है।

जब हम मुक्त व्यापार समझौतों की बात करते हैं, तो हम क्या बात कर रहे होते हैं ?

स्वतंत्र व्यापार समझौते भिन्न-भिन्न प्रकार के होते हैं और विश्व व्यापार संगठन की भाषा में इन्हें क्षेत्रीय व्यापार समझौते (रीजनल ट्रेड एग्रीमेंट - RTA)³ भी कहा जाता है। डब्लू टी ओ ने स्वमेव एक ट्रेकर⁴ (खोजी विभाग) का गठन भी किया है जो कि विभिन्न क्षेत्रीय व्यापार समझौतों पर निगाह रखते हैं। वैसे भी डब्लू टी ओ का मूल औचित्य ही यही था कि वैश्विक स्तर पर अवश्यमेव ऐसा एक स्थान व एक स्थल हो

जहां सभी सरकारें आ सकें और वैश्विक व्यापार नियमों को लेकर आपस में बातचीत कर सकें। ऐसा इसलिए क्योंकि मान लो देश 'अ' देश 'ब' से बातचीत कर रहा है। इसके बाद देश 'ब' देश 'स' के साथ व्यापार समझौते पर हस्ताक्षर कर रहा है और देश 'स' व देश 'अ' विभिन्न व्यापार समझौते कर रहे हैं, और ऐसे में तमाम सारी उलझने सामने आने लगती हैं, जैसे अलग-अलग नियम, अलग-अलग मानक, तमाम द्विपक्षीय - बहुपक्षीय समझौतों या क्षेत्रीय समझौतों की वजह से शुल्क (टेरिफ) में कमी। परंतु डब्लू टी ओ के गठन हेतु यह औचित्य दिया गया था कि हम विश्व के सभी देशों को एक ही मेज (स्थान) पर लाएं, उनके अंतर को पहचानें, हम विकासशील देशों और न्यून विकसित देशों (LOC) के साथ विशेष व्यवहार करें और उन्हें कुछ खास अधिकार भी दें। हम परंतु यह सबकुछ ऐसा नहीं था जो कि विकसित विश्व और उनकी सरकारों द्वारा पोषित कारपोरेशंस को बहुत सुहाता। विकसित विश्व की तो यह प्रवृत्ति है कि डब्लू टी ओ की परिधि के बाहर जाकर समानांतर उत्तर-दक्षिण और उत्तर-उत्तर समझौतों पर बातचीत करता रहे और जबकि हम इसकी छाया संयुक्त वक्तव्य एवं पहल (जॉइंट स्टेटमेंट एण्ड इनिशिएटिव (JSIS) में देखते भी हैं। इसके माध्यम से डब्लू टी ओ विश्व के देशों के छोटे समूह बहुलवादी एवं द्विपक्षीय बातचीत की मुद्रा में होते हैं एवं इसके बाद इसे बहुपक्षीय बना देते हैं और पुनः डब्लू टी ओ में वापस ले आते हैं। अतएव मुक्त व्यापार समझौते और विशाल क्षेत्रीय मुक्त व्यापार समझौते, जिनसे हाल ही में हमारा साबका पड़ा है, वे ऐसे हैं जिनकी प्रवृत्ति है कोशिश करके अपनी अपनी ओर झुकाव बढ़ाना और उन मुद्दों पर "प्रगति" दिखाना, जिनपर कि विशाल कारपोरेशन डब्लूटीओ से नियम बनवाना चाहते हैं।

अब मैं यह बात उठाना चाहती हूँ कि एकस्तर पर तो हम कहते हैं कि यह मुक्त व्यापार है, और वैश्विक खुले बाजार की ओर बढ़ता कदम है, लेकिन इसी समय इन व्यापार नियमों में से कुछ बेहद प्रतिबंधक भी हैं। उदाहरण के लिए ट्रिप्स व्यवस्था, जिसे रांजा ने बहुत विस्तार से समझाया भी है। यह वास्तव में सीमा तय करती है और आईपीआर (बौद्धिक संपदा अधिकार) रखने वाले को २० वर्ष तक का एकमात्र या अनन्य अधिकार प्रदान कर देती है। इस वजह से इसके अन्य कानूनी वैध उपयोग को भले ही वह सार्वजनिक हित का ही क्यों न हो, प्रतिबंधित कर देती है।

उदाहरण के लिए पेटेंट करे गए बीज को लेकर किसान की स्वतंत्रता और कृषि में ट्रेडमार्क युक्त तकनीक का प्रयोग या सार्वजनिक स्वास्थ्य के सम्मुख आ रही चुनौतियां (यहां सिर्फ पेटेंट की ही नहीं बल्कि दवाईयों को लेकर डाटा की आवश्यकता) अतएव जब वे मुक्त व्यापार कहते हैं तो उनका अर्थ होता है सरकारी नियमनों और प्रावधानों से मुक्त व्यापार और यह वास्तव में पूंजीवाद की पाशविक भावना को छुट्टा छोड़ देना ही है। जबकि विश्व व्यापार संगठन की प्रक्रिया में आम सहमति के बिना निर्णय नहीं लिया जा सकता तो ऐसे में आप असमान भागीदारों के साथ मुक्त व्यापार समझौते वाला रास्ता अपनाते हैं, जिससे कि आप द्विपक्षीय समझौते वाले भागीदार की बाह मरोड़ सकें और उस पर शर्तें लाद सकें। उदाहरणार्थ अमेरिका और श्रीलंका या अमेरिका व्यापार प्रतिनिधि (यूनाइटेड स्टेट्स ट्रेड रिप्रेजेंटेटिव) एवं वियतनाम ये कुछ शुरुआती द्विपक्षीय समझौते, जो दो देशों के मध्य हैं। क्या ये उच्च श्रेणी के द्विपक्षीय स्तर पर हुए समझौते हैं ? इसमें उन्हें बाध्य किया गया है कि वे अमेरिका से आने वाली तकनीक को लेकर बौद्धिक संपदा अधिकार (आईपीआर) संरक्षण को लेकर उच्च स्तर पर अपनी सहमती दर्ज करें। यह विश्व व्यापार संगठन जो अपने सदस्य देशों से मांग करता है, उससे बहुत अधिक है। तो यह अनिवार्यतः सामने आ रहा है कि क्या मुक्त व्यापार समझौते विश्व व्यापार संगठन और व्यापार प्रणाली से संचालित हैं ? मैं सोचती हूँ कि यह तलाशना महत्वपूर्ण है कि हमने न केवल उन मुक्त व्यापार समझौतों पर बातचीत करना शुरू कर दिया जो कि शुरुआती (पहली पीढ़ा के) मुक्त व्यापार समझौते थे, लेकिन सन् २०११ में, स्थितियां तब सर चढ़ कर बोलने लगीं, जब बहुराष्ट्रीय कारपोरेशंस (निगम) को द्विपक्षीय निवेश संधियों का लाभ मिलना प्रारंभ हुआ तो उन्होंने अपने निवेशकों के अधिकारों के संरक्षण लिए भारत सरकार पर मुकदमे दायर करना शुरू कर दिया।

भारत-आस्ट्रेलिया द्विपक्षीय निवेश संधि के अन्तर्गत यह मामला पुनः सामने आया कि किस तरह द्विपक्षीय निवेश संधियां निवेशकों को संरक्षण के अधिकार प्रदान कर रही हैं और निवेशकों के नियमन को लेकर सरकारों की जगह (अधिकार) सीमित कर रही हैं, खासकर जनहित के संदर्भों में।

इसके माध्यम से अनेक कारपोरेशंस जिनमें वोडाफोन, केअर्न एनर्जी, टेलोनोर, निसान आदि शामिल हैं, को इन द्विपक्षीय निवेश संधियों और प्रावधानों के माध्यम से इतनी शक्ति मिल गई कि अगर कोई सरकार इससे संबंधित कोई कानून बनाती है, या न्यायालय का कोई निर्णय इन प्रावधानों के खिलाफ जाता है, या कोई (प्रतिकूल) प्रशासकीय निर्णय (जैसे स्पेक्ट्रम, टेली कम्प्युनिकेशंस के लाइसेंस रद्द करना) लिया जाता है, तब वे (बहुराष्ट्रीय कंपनियां) निजी मध्यस्थता (आर्बिट्रेशन) के माध्यम से सरकार पर दावा कर सकते हैं। विश्व व्यापार संगठन में शिकायत निवारण के लिए एक संस्था मौजूद है, लेकिन मुक्त व्यापार समझौतों और द्विपक्षीय निवेश संधियों को लेकर ऐसा कोई वैश्विक संस्थान नहीं है जहां पर सरकार विवाद निपटाने के लिए जा सकती हो। अतएव मुक्त व्यापार समझौतों और द्विपक्षीय निवेश संधियों को लेकर जोखिम न केवल मुददों का आधिक्य है बल्कि जिस तरह से वे नीतिगत मामलों में टांग अढ़ाते हैं उसका यह नतीजा सामने आता है कि इन समझौतों से अपने विवादों के निपटारे के लिए सरकारों को महंगे शिकायत निवारण हेतु निजी मध्यस्थ ट्रिब्युनलों के पास जाना पड़ता है। यह पहली बार है जब अंतराष्ट्रीय कानून में इन मुक्त व्यापार समझौतों और बीआईटीएस (BITS) के माध्यम से यदि निवेशक राष्ट्र को जो शिकायत निवारण (ISDS) पद्धति अस्तित्व में है, के माध्यम से इन बहुराष्ट्रीय कंपनियों को यह शक्ति (अधिकार) दी गई है कि वे सरकारों पर सीधा मुकदमा ठोक सकते हैं और हर्जाने के बतौर लाखों डालर का दावा कर सकते हैं। इस तरह के कुछ मामले भारत सरकार पर भी लंबित हैं, इससे निश्चित तौर पर जोखिम तो है। इसी कारण से, सन् २०१५ में भारत सरकार का विदेश मंत्रालय स्वमेव एक नमूना दस्तावेज लाया। यह एक तरह का आदर्श द्विपक्षीय व्यापार एवं निवेश समझौता है। इसके अन्तर्गत उन्होंने न केवल वह सब शामिल किया है जो कि निवेश की परिभाषा में शामिल है (जब विदेशी या स्वदेशी निवेशक अपना धन लगाता है या उद्यम स्थापित करना है या बौद्धिक संपदा अधिकार (IDR) चाहता है) बल्कि यह अभिकथन भी वर्णित है कि जब विवाद होता है, तब ऐसी स्थिति में कारपोरेशन विवाद निपटान हेतु इस तरह के निजी मध्यस्थता ट्रिब्युनल स्थापित करने के पहले धरतू (भारत) के न्यायालय की अवहेलना नहीं कर पाएंगे।

हालांकि इस मॉडल का अभी तक परीक्षण नहीं हो पाया है, और यह भी अभी देखा जाना है कि जब हम नए तरह (पीढ़ी) के द्विपक्षीय निवेश संधियों में प्रवेश करेंगे तो हम इस पर कितना जोर दे पाएंगे। तो समझना होगा कि क्या यह खतरे की घंटी होगी, या सामान्य न्यूनतम या सरकार कुछ प्रावधानों पर बातचीत को तैयार होगी और कुछ प्रावधानों को खत्म कर देगी ? यह अभी देखा जाना है। गौरतलब है यह सब उस भागीदार की ताकत पर भी निर्भर करता है, जिससे सरकार बातचीत कर रही होगी। वैश्विक प्रवृत्ति और भारत के मुक्त व्यापार समझौते : स्थिति और रणनीति

भारत का विश्व व्यापार संघ में प्रवेश के पश्चात मुक्त व्यापार समझौते के एक अनिच्छुक (असंतुष्ट) भागीदार से वर्तमान समय तक बहुत कुछ बदल गया है मैं इस परिवर्तन (शिफ्ट) की ओर ध्यान दिलाना चाहूंगा। शुरुआत में हम एक शिथिल (उदासीन) और अनिच्छुक मुक्त व्यापार समझौता भागीदार थे और हमारे द्वारा बहुत से द्विपक्षीय समझौते या मुक्त व्यापार समझौते नहीं हो रहे थे। यह परिस्थिति पिछले २-३ वर्षों में बदली है। इस परिवर्तन के पीछे ढेर सारी प्रेरणाएं हैं और यह जरूरी है कि भारत की मुक्त व्यापार समझौता रणनीति को इस संदर्भ के साथ तलाशा जाए कि पिछले २-३ वर्षों में पूरे विश्व में इन विशाल क्षेत्रीय मुक्त व्यापार समझौतों को लेकर क्या उभर कर सामने आ रहा है। इनमें से सबसे ज्यादा ध्यान देने लायक है सीपी-टीपीपी (बि.जि.सी) इसे ट्रांस - पेसिफिक पार्टनरशिप (अखिल प्रशांत साझेदारी) (जि.एच.टी.पी.पी.सी) कहा जाता है। मूलतः यह १९९२ थी और अमेरिकी सरकार भी इसका हिस्सा थी। परंतु अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प के कार्यकाल के दौरान अमेरिका इस साझेदारी से बाहर निकल गया क्योंकि चीन भी इसका हिस्सा था (उस समय अमेरिका और चीन के मध्य व्यापार युद्ध भी जारी था)। भारत बि.जि.सी का हिस्सा नहीं था, लेकिन इसे इसलिए संदर्भ में लाना महत्वपूर्ण है क्योंकि यह अगली पीढ़ी का एक प्रस्तावित विशाल क्षेत्रीय मुक्त व्यापार समझौता था, और इसका उद्देश्य था एशिया प्रशांत क्षेत्र और प्रशांत महासागर के किनारे बसे राष्ट्रों में सामंजस्य बैठाना और व्यापार साझेदारों की तरह उन्हें एकसाथ लाना। इसी तरह मई २०१६ में अफ्रीका महाद्वीप मुक्त व्यापार समझौता (अफ्रीकन कॉन्टिनेंटल फ्री ट्रेड एग्रीमेंट) की अवधारण विकसित की गई।

ध्यान देने योग्य बात यह है कि विशाल क्षेत्रीय मुक्त व्यापार समझौतों की तरफ बढ़ते रुझान के बावजूद भारत ने रीजनल कॉम्प्रीहेंसिव इकोनामिक पार्टनरशिप (क्षेत्रीय व्यापक (विस्तृत) आर्थिक साझेदारी) से स्वयं को, सन् २०१६ में अलग कर लिया। इसके पीछे के कुछ क्षेत्रीय चिंताएं थीं, जैसे कृषि व्यापार, सार्वजनिक स्वास्थ्य पर संभाव्य चोट (बौद्धिक संपदा (IP) की जरूरतों के कारण)। इसके अलावा एक कारण यह भी था कि देश में निर्मित वस्तुओं को अन्य व्यापार निर्यात देशों, जैसे कि चीन से अधिक प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ेगा और उनकी भारतीय बाजारों में पहुंच और भी ज्यादा बढ़ जाएगी। एक अन्य महत्वपूर्ण कारण था कि बि.जि.सी को जिस तरह का शुल्क उदारीकरण की जरूरत थी उसे बि.जि.सी के लागू होने के पहले दिन से प्रभावशील हो जाना था। अब यह अनुमान लगाया जा रहा है बि.जि.सी सन् २०२२ में तब से अस्तित्व में आ जाएगा जबकि १५ भागीदारी करने वाले देशों में से न्यूनतम १० देश इसकी पुष्टि कर देंगे। भारत सरकार में इस बात को लेकर आंतरिक चिंता थी कि बि.जि.सी के माध्यम से भारत को किस तरह की व्यवस्थाओं से जूझना होगा, खासकर चीन जैसे देशों को लेकर क्योंकि उनके यहां तो मुक्त व्यापार समझौते अस्तित्व में ही नहीं हैं और इसके अलावा किस तरह की शुल्क कटौती की आवश्यकता पड़ेगी, और क्या यह कटौती सेवाओं, बौद्धिक संपदा, निवेशकों के संरक्षण के मोर्चे पर होगी। उस समय यह सब भारत की चिंताएं थीं, और भारत इसे स्वीकारने के लिए तैयार नहीं था। भारत की बि.जि.सी में शामिल होने के प्रति अनिच्छा के पीछे काफी हद तक सार्वजनिक नाराजी और जिस तरह के व्यापक विरोध प्रदर्शन देशभर में हुए थे उनकी भी अनदेखी नहीं की जा सकती। यह एक राजनीतिक निर्णय था जो कि काफी हद तक जनता के दबाव में लिया गया था।⁵

मुक्त व्यापार समझौतों को लेकर भारत अपनी रणनीति पर पुनर्विचार कर रहा है और इससे पीछे हटने के पीछे वैश्विक प्रवृत्तियां और घरेलू दबाव एवं सार्वजनिक नाराजगी भी काम कर रही है। अनेक देशों में नए मुक्त व्यापार समझौतों के पूरे समूहों को लेकर बातचीत चल रही है। हाँलाकि सन् २०२० इस संबंध में काफी ज्यादा शांत रहा है। और जैसा कि मैंने अन्य भू राजनीतिक विकासों जैसे ब्रेक्जिट (यह जनवरी २०२० से प्रभाव में आया था) का उल्लेख किया था, से तात्पर्य यह है कि भारत और ब्रिटेन दोनों अब द्विपक्षीय स्तर पर मुक्त व्यापार समझौते पर चर्चा को तैयार हो गए हैं।

भारत के मुक्त व्यापार समझौते

- 2020 - कोविड-19
- फरवरी, 2020 - अमेरिका-चीन ETA
- 2020 - भारत ने कई पर हस्ताक्षर किए
- अप्रैल, 2021 - भारत मारिशस - CECPA
- 30 नवंबर से 3 दिसंबर, 2021 - WTOMC12

अभी जिन पर चर्चा हो रही है, देशों के नाम

1. आस्ट्रेलिया - FTA
2. कनाडा - CEPA एवं FIPA
3. यूरोपीय यूनियन - BTIA
4. इजराइल - FTA
5. यूई - CPEA
6. ब्रिटेन - FTA
7. अमेरिका - FTA/BIT

यह कमोवेश पूर्व स्थिति में आया एक परिवर्तन है जब ब्रिटेन स्वयं यूरोपीय संघ (जो स्वयं में एक बड़ा व्यापार समूह है) का हिस्सा था। सन् २००७ में भारत भी यूरोपीय संघ के साथ द्विपक्षीय व्यापार और निवेश समझौते पर चर्चा कर रहा था, लेकिन व्यापक जनविरोध के चलते यह ठंडे बस्ते में चला गया। इसी के साथ भोजन का अधिकार और मानव अधिकार प्रभाव आकलन, जैसी तमाम नागरिक समाज प्रक्रियाओं के चलते इस तरह के द्विपक्षीय निवेश एवं व्यापार समझौते जो भारत और यूरोपीय संघ के बीच पूर्व में प्रस्तावित भी थे। परंतु अब भारत सरकार ने इस तरह के प्रस्तावित द्विपक्षीय व्यापार एवं निवेश समझौते हेतु चर्चा की पुनः शुरुआत में रुचि दिखाई है। अतएव हम अब यूरोपीय संघ और ब्रिटेन के साथ अलग-अलग द्विपक्षीय प्रक्रिया पर विमर्श कर रहे हैं।

हम अलग से अन्य यूरोपीय देशों जैसे नार्वे, आइसलैंड, स्विट्जरलैंड, लीच्टेंस्टीन, जो कि यूरोपीय यूनियन से अलग हैं, और यूरोपीय मुक्त व्यापार समझौता (EFTA) असोसिएशन, से अलग से चर्चा कर रहे हैं। हम सबसे भी मुक्त व्यापार समझौता करने का प्रयास कर रहे हैं। वैसे भारत की रुचि वर्तमान में जिन अन्य देशों से चर्चाओं में है, वे हैं आस्ट्रेलिया, कनाडा (काम्प्रेहेंसिव ईकॉनामिक पार्टनरशिप एग्रीमेंट), संयुक्त अरब अमिरात (UAE)⁶ और अमेरिका। धीमी और उदासीन शुरुआत के बाद अब भारत नई महत्वाकांक्षा व आकांशा के साथ मुक्त व्यापार समझौतों के नये दौर में पहुंच रहा है। वैसे इससे अनिश्चितता की स्थिति भी बन रही है। भारत अब अधिकांशतः विकसित देशों से जुड़ रहा है और पारंपरिक तौर पर वे भारत व बहुत ज्यादा मांगे लादते जा रहे हैं, खासकर अनुपालन के दृष्टिकोण से। ये परिस्थिति हमें उससे भी आगे ले जाएंगी, जितनी मांग विश्व व्यापार संगठन करता है। इसका अपरिहार्य परिणाम होगा कि हमारी घरेलू नीति निर्माण प्रक्रिया पर सीमा लगेगी और बंधन भी लगेगा।

रणनीति : हम इसके बारे में क्या करें ?

अब आगे, यह ऐसा कुछ है जिसको कि फोरम फॉर ट्रेड जस्टिस भी सन् २००६ से उठा रहा है और ये हैं नागरिक समाज (सिविल सोसाईटी) और जनआंदोलनों की मुक्त व्यापार समझौतों और द्विपक्षीय निवेश संधियों को लेकर बढ़ती चिंताएं। फोरम के साथ मेरे जुड़ाव से और जनसमूहों ने जो तथ्य हमारे सामने रखे हैं वह हमें इस तरह के मुक्त व्यापार समझौतों के प्रति बेहद अविश्वासी बनाते हैं। यदि रणनीति के संबंध में बात करें तो मैं सोचती हूँ कि हमें निम्न तीन प्रश्न पूछने व उनका उत्तर देने की आवश्यकता है।

◆ हमें मुक्त व्यापार समझौतों की आवश्यकता क्यों है ? जमीनी तथ्यों से यह स्पष्ट हो रहा है और सामने भी आ रहा है कि भारत इनसे किसी तरह का लाभ नहीं प्राप्त कर पाया है या इच्छित लाभ निकाल पाया है। इन परिस्थितियों से उपार्जित लाभ के लिए आवश्यक है कि हम घरेलू सुधार करें और ऐसी प्रणाली विकसित करें जो समझौते से लाभ निकाल सके और उसी समय इससे प्राप्त संपदा का पुनर्वितरण करने में समर्थ भी हो सके।

इतना ही नहीं हम अन्य सामाजिक या पारिस्थितिकीय सूचकांकों, फिर वह चाहे मानव विकास सूचकांक हों या भूख सूचकांक, के स्तर पर भी बहुत बेहतर नहीं कर पाए हैं। इन सबको लेकर सरकारों को, फिर वह केंद्र सरकार हो या राज्य सरकारें दोनों के ही द्वारा विशेष प्राथमिकता से कार्यवाही करने की आवश्यकता है और मुक्त व्यापार समझौते ठीक इसके खिलाफ जाते हैं। इतना ही नहीं शायद उनसे इनका टकराव ही है। तो यह सवाल पूछना बेहद जरूरी है कि, हमें इस तरह के मुक्त व्यापार समझौतों की जरूरत ही क्यों है ?

◆ हम मुक्त व्यापार समझौतों पर किस तरह चर्चा करें ? यह फोरम के लिए चिंता का विषय है और वह इसे उठाता भी रहा है कि इन समझौतों पर कोई सार्वजनिक बहस नहीं हो रही है और इन्हें लेकर सार्वजनिक प्रकटीकरण की कमी केवल भारत की ही नहीं, बल्कि इस क्षेत्र के सभी नागरिक समाजों (सिविल सोसाइटी) की चिन्ता का विषय है। भारतीय संविधान का अनुच्छेद २५३ संसद को यह शक्ति देता है कि वह देश की नौकरशाही के माध्यम से चर्चा किए गए मसलों पर चर्चा करे, और ऐसी किसी संधि, समझौते या सम्मेलन को लेकर कानून बनाए। परंतु ऐसा राज्य सरकारों और व्यापक सार्वजनिक परामर्श के बाद ही हो। परंतु इस तरह के अधिकांश संवाद बड़े व्यापार और उद्योग घरानों के आंतरिक कक्षों में संपन्न हो जाते हैं और जिस वर्ग पर इसका जमीनी प्रभाव पड़ने वाला होता है, फिर वह चाहे किसान हों या मछुआरे या महिला समूह या मरीजों के संगठन, सभी को इन मुक्त व्यापार समझौतों को लेकर कभी विश्वास में लिया ही नहीं जाता। नागरिक समाज ने पारदर्शिता की कमी पर भी प्रश्न उठाए हैं क्योंकि जब तक मसौदा जनता को उपलब्ध नहीं कराया जाता, तब तक नागरिक समाज औचित्यपूर्ण ढंग से इससे जुड़ नहीं पाता और सरकार जिस तरह के मुक्त व्यापार समझौते या द्विपक्षीय निवेश संधि में प्रवेश करने जा रही है, को प्रभावित (हस्तक्षेप) नहीं कर पाता। फोरम फॉर ट्रेड जस्टिस ने भी यह मांग की है कि हमें गुप्त सौदों की आवश्यकता नहीं है और मुक्त व्यापार समझौता करने से पहले इन समझौतों की संबंधित देशों की संसद से पुष्टि कराई जाए। भारत में इन्हें लेकर अभी तक संसदीय छानबीन की प्रक्रिया मौजूद नहीं है।

आप में से कईयों को याद होगा कि जब भारत एक प्रशासकीय कानून के जरिए विश्व व्यापार संगठन का सदस्य बना, तो कई राज्य सरकारों जैसे राजस्थान और तमिलनाडु राज्यों ने भारत सरकार द्वारा बिना राज्य सरकारों के परामर्श के इस व्यापक व्यापार समझौते के केंद्र सरकार के (एकतरफा) निर्णय को सर्वोच्च न्यायालय में मुकदमा दायर कर चुनौती दी थी। यह इस संदर्भ में था कि इसके अन्तर्गत आने वाले कई विषय (जैसे कृषि) राज्यसूची में आते हैं। तो यहां पर संवैधानिक चुनौती भी है और हमें इस पर बात करना चाहिए। हमें यह मांग करना चाहिए कि सरकार इस प्रक्रिया को सांस्थानिक बनाए जिसके माध्यम से इन व्यापार व निवेश समझौतों की छानबीन की जा सके और सार्वजनिक परामर्श से सार्थक परिणाम सामने आ सकें।⁷

◆ मुक्त व्यापार समझौतों को लेकर हम किससे चर्चा करें ? क्या दक्षिण - दक्षिण व्यवस्था अधिक लाभकारी होगी ? हमारे पास कुछ अन्य समूहों जैसे आईपीएसए (ISPA) सार्क (SAARC), आसियान (ASEAN) के साथ सहयोग का अनुभव है, लेकिन विकसित देशों के साथ मुक्त व्यापार समझौतों में प्रवेश करना बिल्कुल ही अलग बात है। एक जनप्रिय मांग यह है कि इन व्यापार समझौतों में जाने और हस्ताक्षर से पहले पूर्व प्रत्याशित (ex-Ante) आकलन अवश्य किया जाए। अंत में यही, कि हमें स्वयं के टीकाकरण की आवश्यकता है और नई पीढ़ी के उन मुक्त व्यापार सौदों के खिलाफ हमें प्रतिरोधक शक्ति (Immunity) निर्मित करना होगी।

अपने समय की व्यापार एवं राजनीतिक अर्थव्यवस्था पर कुछ विचार

बिस्मितीय धर →

हम आज (२७ नवंबर, २०२१) तब मिल रहे हैं, जब यह बात सामने आई गई है कि विश्व व्यापार संगठन का बारहवां मंत्रीस्तरीय सम्मेलन दूसरी बार अनिश्चितकाल के लिए स्थगित हो गया है। इससे अनिश्चितता में वृद्धि हुई है। यह स्थगन कोविड महामारी की वजह से हुआ है। इसका नया प्रकार दक्षिण अफ्रीका से है जो कि अनेक देशों के लिए खतरा बन गया है, और यह वास्तव में प्रतिनिधिमंडलों के लिए चिन्तनीय विषय है। ऐसा इसलिए भी है क्योंकि बड़े (समृद्ध) देशों द्वारा कई महत्वपूर्ण मुद्दों को अब चर्चा के लिए नहीं लाया जा सकता जबकि इन पाखंडी विकसित देशों से ट्रिप्स (TRIPS) को त्यागने पर तुरंत बात करने की आवश्यकता है।

वैश्विक समुदाय के एकसाथ आए बिना और विकसित देशों द्वारा इस मुद्दे पर चर्चा किए बिना यह विश्व हम सभी के लिए सुरक्षित स्थान नहीं रह सकता। यह क्रूर संदेश हमें एकबार पुनः दे दिया गया है। मैं कम आय वाले देशों में किस हद तक टीकाकरण हुआ है से संबंधित कुछ आंकड़े देख रहा था। मैंने पाया कि कम आय वाले देशों की महज ५-६ प्रतिशत जनसंख्या को ही वेक्सीन लग पाई है या उन्हें वेक्सीन की केवल एक ही खुराक (डोज) मिल पाई है। वहां टीकाकरण (वेक्सीन) की स्थिति अत्यंत भयावह है। विकसित देशों को अंततः यह समझ ही जाना चाहिए कि स्वयं का टीकाकरण (वेक्सीनेटेड) कर लेना और स्वयं को सुरक्षित बना लेना ही पर्याप्त नहीं है।

इनमें से कुछ (विकसित) देश बूस्टर डोज की बात कर रहे हैं और अपनी जनता को सुरक्षित कर रहे हैं। परंतु एक परस्पर जुड़े विश्व में, जैसी कि दुनिया वे चाहते हैं, जिसमें कि व्यापार एवं बाजार तक सबकी अधिक पहुंच हो, और इसी एजेंडे को तो वे वेस्टमिनिस्टर में होने वाले मंत्रीस्तरीय सम्मेलन के लिए बढ़ावा दे रहे थे, हेतु उन्हें यह स्वीकारना चाहिए कि जब तक अंतिम व्यक्ति सुरक्षित नहीं है, तब तक देशों के बीच वैश्विक व्यापार और आर्थिक उलझनों का निपटारा सुरक्षित वातावरण में नहीं हो सकता। इस तरह के पाखंड का अंत होना जरूरी है क्योंकि यह इस हद तक फैल चुका है कि इस दुनिया में तमाम लोगों की वेक्सीन तक पहुंच ही नहीं बन पा रही है। आपको ऐसी परिस्थिति का निर्माण करना पड़ेगा जिसमें अधिक से अधिक वेक्सीन सस्ते मूल्य पर उपलब्ध हो सके। यहीं पर विकासशील देशों में उत्पादन बढ़ाने के महत्व की बात भी सामने आ जाती है।

विश्व व्यापार संगठन में बड़ी संख्या में व बहुतायत सदस्य इस बंधन को त्यागने के प्रस्ताव के पक्ष में हैं और वे चाहते हैं कि ऐसी तकनीक हर उसको उपलब्ध हो जो सस्ती कीमत पर वेक्सीन निर्माण में सक्षम हो और यह दुनिया के अंतिम नागरिक को उपलब्ध करवा सके तो एक तरह से यह विकसित देशों को बहुत ही क्रूर स्मरण कराना है कि केवल उनका सुरक्षित बना रहना ही काफी नहीं है। साथ ही इतना ही काफी नहीं है कि वे केवल अपने ही हितों का ध्यान रखें। उन्हें भी विश्व समुदाय का हिस्सा बनना होगा। उन्हें अन्य देशों खासकर विकासशील एवं न्यून विकसित देशों की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं के प्रति भी संवेदनशील होना पड़ेगा। इसके बिना वैश्विक व्यापार, वैश्विक अर्थव्यवस्था को साथ लेकर आगे नहीं बढ़ पाएगा। इसके बिना यह कल्पना भी नहीं की जा सकती कि विश्व अर्थव्यवस्था समृद्ध हो सकती है जबकि बहुसंख्य लोग या वैश्विक नागरिक जो कि विकासशील देशों और न्यून विकसित देशों में रहते हैं, को व्यापार के लाभों से मेहरूम रखा जाए। भारत को भी आज इसी स्थिति का सामना करना पड़ रहा है क्योंकि कोविड की वजह से गरीब लोगों और प्रतिकूल परिस्थितियों में रहने वालों पर चोट हो रही है। रोजगार की हानि और अपर्याप्त क्रयशक्ति, जिसने अधिकांश अर्थव्यवस्थाओं को प्रभावित किया है, तब तक सामान्य नहीं हो सकती, जब तक कि गरीब लोग, जिनका कि आबादी में बहुमत है, को भारत एवं अन्य देशों में पहले वाली आमदनी पुनः नहीं प्राप्त हो जाती और देश की समृद्धि में उन्हें उनका हिस्सा नहीं मिल जाता। इसके बिना अर्थव्यवस्थाएं चल ही नहीं सकतीं। तो मैं आपको संपूर्ण संदर्भ से अवगत कराता हूँ।

पुनरुत्थान (रिकवरी)

वैश्विक अर्थव्यवस्था की स्थिति पुनः उछाल पर है। अब इस बात के आसार दिखाई दे रहे हैं कि अर्थव्यवस्था पटरी पर आ रही है और वैश्विक व्यापार वापसी या पुनरुत्थान के पथ पर है। परंतु अनेक देश जिनमें भारत भी शामिल है, में धरेलू मांग कि स्थिति वास्तव में बहुत अच्छी नहीं है। वास्तव में वह व्यापार ही है जो कि वृद्धि हेतु उत्प्रेरक का कार्य करता है, और आप में से अधिकांश जानते ही होंगे कि भारतीय व्यापार, खासकर निर्यात, इस वर्ष बहुत ही अच्छा हो रहा है।

आप प्रत्येक और हर तरह के समझौतों पर नजर दौड़ाएंगे तो आपको इसी तरह का असंतुलन दिखाई पड़ेगा। यह कतई आश्चर्यजनक नहीं है कि कुछ वर्षों बाद, जब विकासशील देशों की ओर से क्रियान्वयन के मुद्दे पर एक दस्तावेज प्रस्तुत किया गया और उसमें यह सूचीबद्ध किया गया कि कम से कम ६६ ऐसे बिंदु हैं, जिन पर विकासशील देश नाखुश हैं, क्योंकि ये सभी असंतुलित विश्व व्यापार संगठन के समझौतों में मौजूद थे। वे समझौतों के ढांचे में परिवर्तन चाहते थे। विकासशील देशों की सामुहिक संकल्प शक्ति ने बेहद विलक्षण परिणाम दिया क्योंकि सन् २००१ के दोहा मंत्रीस्तरीय सम्मेलन में उन्होंने दोहा विकास एजेंडा (कर्वी कमअमसवचउमदज ।हमदक) अर्जित कर लिया। यह विश्व व्यापार संगठन में सुधार का एजेंडा या कार्यसूची है। इनमें से कई मुद्दों को वास्तव में दोहा विकास एजेंडे में संपुटित (समझाया) किया गया है और उसके बाद वहां से नये सिरे से बातचीत शुरू हुई जिसमें कि कृषि पर समझौता और अन्य कई मुद्दों, जिसमें बौद्धिक संपदा अधिकार भी शामिल है, को एकतरह से पुनः संतुलित करने का प्रयास किया गया। यह बातचीत सन् २००२ से २००८ तक गंभीरता से चली, जब तक की वैश्विक वित्तीय संकट ने दस्तक नहीं दी थी। इसके बाद विकसित देशों ने विश्व अर्थव्यवस्था में छाई अनिश्चितता का लाभ उठाया और दोहा आदेश पत्र (मेंडेट) से पल्ला झाड़ लिया, और उसके बाद वास्तव में यह फिर कहीं नहीं पहुंच पाया। विकासशील देशों के लिए भी यह सब बहुत कठिन हो गया और एक बिंदु पर आकर उन्होंने स्वयं ही राजनीतिक इच्छाशक्ति गवां दी। अंततः सन् २०१७ में ब्युनस आर्यस में हुए ग्यारहवें मंत्रीस्तरीय सम्मेलन में अत्यंत चेतावनी भरी भाषा में कहा गया कि सदस्य देशों में इस बात को लेकर कोई आम सहमति नहीं है कि दोहा विकास एजेंडा जीवित है या मृत। इसका स्पष्ट अर्थ है कि विकसित देश दोहा विकास एजेंडा को क्रियान्वित (जिन्दा) नहीं करना चाहते थे। वे इस पूरे विकास समझौते को मृत देखना चाहते थे। अतएव विकासशील देशों के प्रयासों के बावजूद दोहा विकास समझौता वास्तविक तौर पर मृत हो चुका था।

यह सबकुछ बारहवें अंतरमंत्रीय सम्मेलन की तैयारी बैठकों में हुए विमर्शों व प्रक्रियाओं में बहुत अच्छे से परिलक्षित होता है। उदाहरण के लिए, कृषि को लें, दोहा विकास एजेंडे में यह बहुत स्पष्टता से कमोवेश तय कर दिया गया था कि यह समझौता भविष्य में किस प्रकार असंतुलित सिद्ध होगा। साथ ही यह देखना भी कितना महत्वपूर्ण है कि विकासशील देशों से संबंधित विशेष व विभेदकारी प्रावधानों से किस तरह निपटा जाए। इसका सीधा सा अर्थ था कि विकासशील देश विशेष प्रावधानों का लाभ उठा पाएं। यह तीन अत्यंत महत्वपूर्ण व ठोस उद्देश्यों पर टिका था। पहला था खाद्य सुरक्षा। दूसरा ग्रामीण आजीविका और तीसरा था ग्रामीण विकास। तो यह एकदम स्पष्ट था कि कृषि को लेकर सभी नीतियां और वह सब जो विश्व व्यापार संगठन आदेशित कर रहा था इन तीन उद्देश्यों, खाद्यसुरक्षा, आजीविका और सम्मिलित विकास (Pooled Development) पर आधारित होगा। उदाहरण के लिए भारत जो भी सब्सिडी देता है उसका बड़ा हिस्सा कम आमदनी और न्यूनतम संसाधन वाले किसानों को लक्षित होता है। यही वह भाषा है जिसका इस्तेमाल विश्व व्यापार संगठन करता है और प्रत्येक देश को इस बात की आजादी है कि वह इसकी पहचान करे कि कौन-कौन कम आय और न्यूनतम संसाधन वाले गरीब किसान हैं। बहुत से लोगों को वास्तव में इस बात को लेकर जागरूकता नहीं है कि भारत सरकार ने विश्व व्यापार संगठन में यह घोषित किया है कि भारत में जोत के ६६.४३ प्रतिशत की खेती कम आय और न्यूनतम संसाधन वाले किसानों द्वारा की जाती है⁸ तो, भारत सरकार के हिसाब से भारत में बड़ी संख्या में किसान इस हद तक कम आमदनी और संसाधन वाले हैं। वर्तमान में संपूर्ण सब्सिडी व्यवस्था की समीक्षा हो रही है। इस पूरी कवायद का उद्देश्य सब्सिडी में कमी करना है। हाँ, भारत कृषि सब्सिडी के सबसे बड़े प्रदाताओं में से एक है, और यह कतई आश्चर्यजनक नहीं है यदि वर्तमान प्रस्तावों पर गौर करें तो कि कुल्हाड़ी (गाज) तो भारत पर ही गिरेगी⁹ अब, मैं सोचता हूँ कि नागरिक समाज (सिविल सोसाईटी) और वे लोग जो कि विश्व व्यापार संगठन के पवित्र (प्रतिष्ठित) परिसर से बाहर और सरकारी भवनों से बाहर हैं, के लिए आवश्यक है कि वे विश्व व्यापार संगठन द्वारा कृषि सब्सिडी समाप्त करने की धमकियों पर पुनर्विचार कर अपनी प्रतिक्रिया दें।

विश्व व्यापार संगठन सब्सिडी को वास्तव में किस नजरिए से देखे इसके लिए मैं मापदंडों को लेकर कुछ सुझाव देता रहा हूँ। मेरा मानना है कि, इन्हें एक ही तरह से नहीं देखना चाहिए, बल्कि इसे वास्तव में इस तरह देखना चाहिए कि इससे वैश्विक बाजार में कितना विरूपण (तोड़मरोड़) दर्ज होगा। इस बात के अत्यंत स्पष्ट प्रमाण हैं कि अमेरिका और यूरोपीय संघ जैसे विकसित देश अपनी खेती को मुख्यतया बाजारों पर कब्जा जमाने के लिए ही सब्सिडी दे रहे हैं। जबकि जो कुछ भारत कर रहा है, वह मुख्यतया आजीविका और खाद्यसुरक्षा के संरक्षण के लिए ही कट रहा है। यह तो हमेशा ही कहा जा सकता है कि भारत का विकास एजेंडा इसलिए त्रुटिपूर्ण है क्योंकि वह लोगों को कृषि से अलग करने में सक्षम नहीं हो पाया। परंतु आज की वास्तविकता तो यही है कि भारत का बहुसंख्य कार्यबल प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से खेती पर ही निर्भर है, और उन्हें सहायता की आवश्यकता है। उनके लिए आजीविका का अन्य कोई विकल्प मौजूद नहीं है और इस निराशा को ठीक एक साल से चल रहे किसान आंदोलन में साफ - साफ देखा जा सकता है।

भारत के लिए अब यह बहुत महत्वपूर्ण है कि उसके पास निपटान के लिए कुछ समय हो और वह जानता है कि क्या घटित होने वाला है। कृषि समिति के अध्यक्ष ने कुछ दिन पहले हमें सूचना दी है उन्होंने सभी प्रस्ताव हटा लिए हैं। (या पर्दे के पीछे चले गए हैं) और यह खाद्य सुरक्षा को लेकर सार्वजनिक भंडारण से संबंधित था और यही तो सार्वजनिक वितरण प्रणाली और सरकारी खरीदी प्रणाली की जान है। सामान्यतया विश्व व्यापार संगठन उत्पादन से संबंधित सब्सिडी पर निशाना साधता है, लेकिन यह तो उपभोग सब्सिडी है और जिसका निशाना खाद्य (भोजन) सब्सिडी पर है, इसका क्रियान्वयन खाद्यान्नों की सार्वजनिक खरीदी को और फिर इस भंडारण का वितरण सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से गरीबों को होता है।

वर्तमान परिस्थितियों में एक निश्चित सीमा से आगे भारत इन योजनाओं के अन्तर्गत सब्सिडी नहीं दे सकता। अतएव वास्तविक खतरा यह है कि विश्व व्यापार संगठन का सदस्य बने रहने के लिए उसे सरकारी खरीदी और सार्वजनिक वितरण प्रणाली को रोकना पड़ेगा और यह एक मुद्दा है जिसके माध्यम से विश्व व्यापार संगठन की सदस्यता का मामला तय होगा।

ऐसे तमाम सारे प्रस्ताव सामने आए हैं और इसका एक संभाव्य समाधान यह सुझाया गया है, जो भी देश इस तरह की व्यवस्था संचालित कर रहे हैं वे अपने कुल उत्पादन का 95 प्रतिशत से ज्यादा न खरीदें। लंबे समय से सरकार कुल उत्पादन के 30 प्रतिशत से कम की खरीदी (वसूली) कर पा रही थी। यह हमेशा कुल उत्पादन के 25-30 प्रतिशत ही रहती है। पिछले वर्ष चावल की खरीदी करीबन 50 प्रतिशत और गेहूँ की 80 प्रतिशत से ज्यादा हो गई थी। तो इससे किसान आंदोलन का प्रभाव स्पष्ट तौर पर खरीदी पर दिखाई दे रहा है और सरकार भी कह रही है कि उसने इस वर्ष ज्यादा खरीदी की है। तो आप देख सकते हैं कि इस प्रस्ताव का क्या प्रभाव पड़ेगा। यह 50 प्रतिशत से घटकर 95 प्रतिशत पर आ जाएगा। अतः हम समझ ही सकते हैं कि इसका किसानों पर किस तरह का प्रभाव पड़ेगा अतएव सब्सिडी के मुद्दे पर भारत की वास्तविक समस्याएं कृषि को लेकर हैं। हालांकि, अन्य जुड़ी हुई समस्याएं भी हैं जैसे कि बाजारों का खुल जाना और यह खतरा लंबे समय से बना हुआ है। यदि हमें अमेरिका और यूरोपीय संघ से सब्सिडी युक्त खाद्यान्न व इसी तरह की अन्य सब्सिडी प्रदत्त वस्तुएं खरीदने के लिए बाध्य किया जाता है, तो ऐसी स्थिति में भारत के किसानों की आजीविका खतरे में पड़ जाएगी और यह हमारे लिए एक गंभीर समस्या होगी। नागरिक समाज को वास्तव में इस ओर ध्यान देना चाहिए। यह बेहद निराशाजनक है कि व्यापार संबंधी मुद्दों को लेकर सिविल सोसाइटी के जुड़ाव में बेहद गिरावट आई है। अतएव यह वास्तव में खुशी की बात है कि इस क्षमता निर्माण कार्यशाला का आयोजन हुआ और आयोजकों ने व्यापार एजेंडे को अपने कार्यक्रम से जोड़ा। अंत में कुछ बातें मछलीपालन सब्सिडी पर, और यह (कृषि से) एक जुड़ा हुआ मुद्दा है। भारत में कृषि की तरह मछलीपालन क्षेत्र में भी छोटे मछुआरों का बाहुल्य है। कृषि की ही तरह यह आजीविका का एक प्रश्न है और बहुत लम्बी समुद्री सीमा होने के कारण हमारे लिए यह एक महत्व का मुद्दा है। आजकल अधिकांश देश अपने मछुआरों को सब्सिडी प्रदान करते हैं। यह एक जानी मानी बात है। तकरीब 20 वर्षों पहले एक निर्णय लिया गया था कि मछली मारने के लिए सब्सिडी उपलब्ध कराना बेहद नुकसानदेह है, क्योंकि इससे अत्यधिक मात्रा में मछलियां पकड़ी जाएंगी, अवैध ढंग से मछली मारी जाएंगी और भी सभी तरह की समस्याएं खड़ी होंगी।

इसके परिणामस्वरूप मछलियों के भंडार (संख्या) में ह्रास होगा, कमी आएगी। मछलियों आदि के ह्रास से पर्यावरणीय विनाश भी मंडराता दिख रहा है। तब एक निर्णय लिया गया कि इन सभी मछलीपालन सब्सिडी पर लगाम लगाई जाए और इससे जो बर्बादी हुई है उसकी प्रतिपूर्ति की जाए। अब २० वर्षों के बाद बातचीत (समझौता वार्ता) के अध्यक्ष द्वारा एक मसौदा तैयार किया गया है। इस मसौदे पर निगाह डालने से पता चलता है कि यह पूर्णतया असंतुलित है, और कहीं से भी हमारे देश के हितों की रक्षा नहीं करता है। जिस तरह की मदद सरकार छोटे मछुआरों को पहुंचाना चाहती है और जिसके बिना उनकी आजीविका खतरे में पड़ जाएगी, अब वह उन्हें उपलब्ध नहीं करा पाएगी क्योंकि सब्सिडी तभी तक दी जा सकती है जब तक कि मछुआरे समुद्र तट से १२ समुद्री मील तक ही मछली मारने जाए। इसे एक सीमा क्षेत्रीय या प्रादेशिक जल कहा जाएगा। और तब भी यह केवल दो वर्षों के लिए दी जा सकेगी। दो वर्षों के पश्चात इसे नहीं दिया जा सकेगा। भारत ने इसके समानांतर एक अन्य प्रस्ताव दिया है जिसमें कहा गया है कि मछुआरे सिर्फ क्षेत्रीय जल सीमा तक ही मछली मारने न जाएं बल्कि इसकी सीमा को विशिष्ट आर्थिक जोन, जो कि समुद्र तट से २०० समुद्री मील तक का होता है, तक की अनुमति दी जाए। साथ ही बजाए २ वर्षों के सब्सिडी २५ वर्षों तक उपलब्ध कराई जाए। समायोजन में कुछ समय तो लगेगा ही। अभी तक इसके परिणाम के बारे में पता नहीं चला है लेकिन यह स्वागत योग्य है कि बातचीत के लिए कुछ और समय मिल गया है और उसके बाद ही इस पर निर्णय संभाव्य है।

विवादास्पद बिंदु तो यही है कि विश्व व्यापार संगठन के मंत्रीस्तरीय सम्मेलन की कार्यसूची (एजेंडा) का एकमात्र ध्येय है, वैश्विक व्यापारिक प्रणाली में असमानता को बढ़ाना। हर जगह आधार रेखा या मूल बात यही है कि केवल बाजार तक पहुंच की बात होगी और यह केंद्रित होगी विकसित देशों की अन्य देशों में पहुंच बढ़ाने तक। जबकि विकासशील देश स्वयं को कोविड महामारी से बाहर लाने हेतु संघर्षरत हैं। अगर इस तरह का एजेंडा मंत्रीस्तरीय सम्मेलन से पारित हो गया तो वह इन देशों को

भयानक रूप से अक्षम बना देगा। संकट में एक प्रकाश की किरण की तरह हमें सभी शक्तियों, सभी संसाधनों, सभी तर्कों को इकट्ठा कर आने वाले महीनों में इसे और भी आगे ले जाने की आवश्यकता है क्योंकि जिस समय तक मंत्रीस्तरीय सम्मेलन होगा तब तब हमारे पास कुछ अपने स्वयं के कुछ बिंदु होंगे खासकर उन प्रस्तावों के विरुद्ध जो कि वहां पटल पर रखे जाने वाले हैं। हम भी इसमें भागीदारी करें और मुझे विश्वास है कि रवि इसमें अपना दिमाग लगाएंगे। चूंकि वे जेनेवा से लिखते और रिपोर्ट करते हैं, तो वह इस प्रक्रिया में ज्यादा सीधे तौर पर शामिल हो पाएंगे। ऐसे में उनकी क्षमता और परिपूर्ण समझ, जो कि उन्होंने इस दौरान अर्जित की है, को इस देश के नागरिकों की बेहतरी के लिए अच्छे से उपयोग में लाया जा सकता है।

डी. रवि कांत →

विश्व व्यापार संगठन, मंत्रिस्तरीय बैठकें एवं
समय-समय पर होने वाली चर्चाएं

हम शुरुआत करते हैं उससे जो कल रात (२६/२७ नवंबर २०२१) को घटा। इसे स्पष्ट करें तो बैठक अनिश्चित काल तक के लिए निलंबित हो गई है, और हम नहीं जानते कि इसे पुनः कब आहूत किया जाएगा। यहां रुचिकर मुद्दा यह है कि किस तरह के आदर्श न्याय परिकल्पना के तहत बैठक रद्द की गई ? स्विस सरकार द्वारा ब्रसेल्स और दक्षिण अफ्रीका से विमान सेवाओं को रोक देने के बाद यूरोपीय संघ ने आयोजकों पर दबाव डाला। यहीं से सारी विडम्बना शुरु होती है। यूरोपीय संघ ही है जो कि तीन या चार देशों को साथ लेकर ट्रिप्स छूट पर समझौते को कठोरता से बाधित कर रहा है। बिस्वजीत ने ठीक ही कहा है, कि निर्धनतम देशों, न्यून विकसित देशों और अफ्रीकी देशों में वेक्सीन की पहुंच मात्र ५.६ प्रतिशत तक ही है। विकसित देशों को अब पता चला गया है कि यदि निर्धनतम देशों में वायरस को खुला छोड़ दिया जाता है तो आप अपने लोगों पर अतिरिक्त वेक्सीन का प्रयोग कर सकते हो। ऐसा तब है जबकि विश्व के इस (विकसित देश) हिस्से में वेक्सीन को लेकर विरोध है बावजूद इसके कि वहां वायरस फैल रहा है।

ट्रिप्स में छूट

ट्रिप्स से छूट या इसका त्याग उनके लिए एक मूलभूत चुनौती है। यह वास्तव में एकतरफा समझौता ट्रिप्स : व्यापार संबंधी बौद्धिक संपदा समझौते वाला पक्ष है। यह एक ऐसा समझौता है, जिसे दवाई कंपनियों ने वास्तव में बहुत पहले तब लिखा था जब उरुग्वे दौर शुरु हुआ था। यही वह समय था जबकि अमेरिका ने उस समय जबरदस्त विरोध के चलते, जिसमें भारत और तमाम अन्य देश शामिल थे के बावजूद, वैश्विक व्यापार प्रणाली में बौद्धिक संपदा से परिचय कराया था। अमेरिका ने इसे यह वायदा करते हुए प्रविष्ट करवा लिया था कि विकासशील देशों को वस्त्र जैसे क्षेत्रों में पर्याप्त भुगतान किया जाएगा। उस समय अस्थिर करने वाला एक समझौता प्रचलन में था जो कि वस्त्र एवं कपड़े पर समझौता कहलाता था और वह विकासशील देशों की बाजार तक पहुंच को नकारता था। तभी से ट्रिप्स समझौता अनेक मुद्दों पर सबसे बड़ी समस्या बना हुआ है। खासकर इसे चिकित्सकीय एवं वैक्सीन के संबंध में ऐसी विद्रूप लड़ाई के रूप में हमने दक्षिण अफ्रीका में एंटीरीट्रोवायरल और एड्स की समस्या के दौरान देखा है। तो मैं यह सब क्यों कह रहा हूँ ?

जैसा कि बिस्वजीत ने भी बताया है कि मारकेश समझौता का जबरदस्त जोर जिसे हम सुस्थिर (टिकाऊ) विकास, सुस्थिर शुल्क और सुस्थिर पर्यावरण कहते हैं, पर था। प्रस्तावना की भाषा की बात करें तो तकरीबन प्रत्येक अनुच्छेद में “सुस्थिर” शब्द का उल्लेख आया है। परंतु आज सबसे भयंकर हमला, चर्चा पर या चर्चा के दौरान विकास पर है। यूरोपीय संघ के कर आयुक्त (टेक्स कमिश्नर) के साथ एक बैठक थी। उसमें पत्रकारों को जिसमें मैं भी शामिल था, को बुलाया गया था। वहां वे कह रहे थे कि हमारे लिए विकास महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि सर्वसमावेशी होना महत्वपूर्ण है। सोचिए बाजाए की पहुंच को लेकर यदि इतनी असमानताएं हैं तो आप केवल आमदनी में समावेशीपन की बात कैसे कर सकते हैं। खासकर तब जब पिछले २०० वर्षों में जिस तरह का परिपूर्ण औद्योगिककरण हुआ है। इतना ही नहीं तमाम अन्य चीजों तक पहुंच की बात करें तो समावेशीपन के विचार का बहुत ज्यादा महत्व नहीं निकलता क्योंकि इसे विकास में तो शामिल किया ही नहीं जा रहा है। इसका अर्थ यह हुआ कि समावेशीपन वास्तव में इसकी विषमताओं में व्यापारिक व्यवस्था में अपनी असमानताओं के साथ स्थायी तौर पर अंतर्निहित है, तो यह जो कि मारकेश समझौते में कहा गया है उसके बिल्कुल विपरीत है। मेरे कहने का अर्थ है, मारकेश समझौते के दो भाग हैं। पहला है लुभावनी भाषा और दूसरा है सभी कानून/आर्थिक सुधार (या संपादन) को कानूनों में बदल दिया गया, जो कि गेट समझौता और अन्य सभी कानूनों के हिस्से थे। ये सभी शुल्क और व्यापार पर सामान्य समझौते (GATT) से उभरे थे या उसका परिणाम थे। अतएव ये आर्थिक कानूनों का संयोजन (जोड़) हैं और पिछले ३० वर्षों के दौरान हम पाते हैं के ये अत्यंत असमान हैं। गौरतलब है ये विकासशील देशों के लिए बिल्कुल बेकार हैं क्योंकि ये वास्तव में उन्हें उन क्षेत्रों में पनपने का मौका नहीं देते जहां पर अभी विकास नहीं हुआ है। कृषि, विकासशील देशों का आधार है। परंतु अन्य अनेक क्षेत्र जैसे उद्योग (आपके सामने व्यापार संबंधित निवेश उपाय नामक मुद्दा है) या यदि कोई जैसा कि सभी देश करते हैं सीढ़ी दर सीढ़ी रिवर्स इंजीनियरिंग (तैयार वस्तु को संशोधित या पुनर्निर्मित करना) के माध्यम से उदाहरणार्थ दवाई उद्योग में आगे जाना चाहता है। वास्तविकता यही है कि यूरोपीय संघ अमेरिका और करीब सात - आठ देश बैठक दर बैठक यह सुनिश्चित कर देते हैं कि यथास्थिति बनी रहे।

बैठकों का ब्योरा

यह जानना बेहद रुचिकर होगा कि पिछले २६ वर्षों के दौरान और विश्वनाथ भी इस पर राजी होंगे, कि विभिन्न मुद्दों के निवारण हेतु बार-बार कहे जाने के बावजूद विकासशील देशों के सामने को ठोस लाभकारी परिणाम नहीं आए हैं। वे उस तरह के परिणाम प्राप्त नहीं कर पाए हैं, जिस तरह के परिणाम कथित उत्तरी राष्ट्र अमेरिकी, यूरोपीय संघ और अन्य सभी मारकेश समझौता, जिस पर कि सन् १९९४ में हस्ताक्षर हुए थे, से प्राप्त कर पाए हैं। सन् १९९६ में जब सिंगापुर में प्रथम विश्व व्यापार संगठन मंत्री स्तरीय सम्मेलन हुआ था, में ये (विकसित देश) सूचना व्यापार समझौता (Information Trade Agreement - ITA) लेकर आए थे। यहां पर भी वे तमाम आईटीए उत्पादों पर शुल्क मुक्ति चाहते थे, जबकि उस समय विकासशील देश उनके विकास की प्रक्रिया में ही थे।

अगर इन सूचना व्यापार समझौता उत्पादों के लिए कोई शुल्क मुक्ति होगी तो विकासशील देशों के लिए यह अत्यंत कठिन होगा कि वे स्वयं के आईटीए उद्योग को विकसित कर पाएं। यही तथ्य है कि अध्ययन दर्शा रहे हैं कि भारत को सूचना व्यापार समझौते और उसके बाद उससे संबंधित शुल्क मुक्ति की वजह से बहुत कुछ भुगतना पड़ा है। इसके बाद दूसरी मंत्री स्तरीय बैठक जिसे गेट (GATT) और विश्व व्यापार संगठन की ५०वीं वर्षगांठ कहते हैं, जेनेवा में सम्पन्न हुई। यहां पर पुनः उन्होंने न केवल आईटीए को आगे बढ़ाया बल्कि एन अन्य दूरगामी एजेंडे हेतु नया दौर जिनमें मुद्दों की व्यापक श्रंखला थी, की शुरुआत की। यह यूरोपीय संघ द्वारा किया गया था। प्राथमिक तौर पर अमेरिका व अन्य विकसित देशों ने इसका अनुपालन किया। उन्हें इस बात से डर लग रहा था कि उन्हें कृषि पर कुछ न कुछ देना ही पड़ेगा। क्योंकि यह उन विषयों में से एक था जिसके बारे में विश्व व्यापार समझौते में लिखा गया था, कि उरुग्वे दौर के परिणामों के क्रियान्वयन के पांच वर्षों बाद सदस्य देश कृषि पर चर्चा की शुरुआत कर सकते हैं। यह कृषि पर समझौते की धारा १८ में उल्लेखित है। इसके बाद यह भी अपेक्षित था कि सदस्य सेवा क्षेत्र से संबंधित तमाम बातों पर चर्चा जारी रखेंगे। अब यही उनका लक्ष्य था। वे यह महसूस ही नहीं करना चाहते थे कि विकासशील देशों के सामने उरुग्वे दौर की चर्चा के बाद गंभीर समस्याएं सामने आ रही हैं।

ये तमाम सारे छिपे समझौतों, जो कि कृषि से लेकर एंटी डॉपिंग, से सब्सिडी और प्रतिकारी (काउंटर वेडलिंग) उपाय, ट्रिप्स, गेट्स, शिकायत निवारण की तमाम प्रक्रियाओं और द्वितीय विवादों से संबंधित थे। यह सन् १९९८ की बात है। तीसरी मंत्रीस्तरीय बैठक सन् १९९९ में सीएटल में हुई। उस बैठक में चीजें धराशायी हो गईं क्योंकि उस समय, क्या कहते हैं कि सामाजिक धारा (सोशल क्लाज) को प्रस्तुत किया गया। यह सामाजिक धारा में शामिल विषय थे, व्यापार और श्रम, और व्यापार एवं पर्यावरण। उस समय तक यह विषय विश्व व्यापार संगठन का हिस्सा नहीं थे। परंतु राष्ट्रपति क्लिंटन का सम्मेलन में आना इस बात का स्पष्ट संकेत था कि वे उस एजेंडे को लिख रहे हैं, जो कि विकासशील देशों को मंजूर नहीं था। तो यह बैठक असफल हो गई। और जिसमें उन्होंने इसे पुनर्जीवित करना चाहा, वह चौथा मंत्री स्तरीय सम्मेलन था जो कि दोहा में हुआ और वहां विकास एजेंडे को प्रस्तुत किया गया। विकासशील देशों के मित्र रॉब डेविस जो कि दक्षिण अफ्रीका के व्यापार मंत्री थे हमेशा कहते थे कि विकासशील देशों को जो स्वत्वाधिकार मिला, वह दोहा विकास एजेंडा है। परंतु वास्तविकता तो यह है कि सभी सफलताएं एवं परिणाम विकसित देशों द्वारा ही उपार्जित किए गए। तथ्य तो यही है कि एजेंडा ने मूलभूत सुधार तो व्यापार व्यवस्था में ही चाहे थे। और मुझे याद है दोहा के समय भारत के व्यापार मंत्री ने चीजों को रोककर बेहद सराहनीय कार्य किया था। अंततः उनकी मांगों के संदर्भ में बड़े देश जिस बात पर राजी हुए थे उन्हें चार विवादास्पद मुद्दों पर मुखर आम सहमति के नाम से जाना जाता है। इन्हें सिंगापुर मुद्दे भी कहा जाता है और इसमें शामिल हैं व्यापार, निवेश एवं प्रशिक्षण, सरकारी खरीदी और प्रतिस्पर्धा नीति। अंतिम को व्यापार सहूलियत या सुविधा कहा जाता है। इन्हें सिंगापुर मंत्रीस्तरीय बैठक के परिणामस्वरूप उभरी चार मांग या अपेक्षा भी कहा जा सकता है जिन्हें दोहा विकास एजेंडे में शामिल किया गया। इसे इस चेतावनी के साथ डाला गया था कि कानकून में होने वाली पांचवी मंत्री स्तरीय बैठक में उपरोक्त चार विषयों पर मुखर आम सहमति होगी, जो कि अनिवार्यतः विकासशील देशों के लिए लाभकारी एवं हैरानी में डाल देने वाली पहल कही जाएगी। इसमें निहित है व्यापार में निवेश जिसकी कि अब निवेशगत सुविधा के रूप में वापसी हुई है। सरकारी खरीदी अभी भी वहां मौजूद है और भारत उन तमाम विकासशील देशों में से एक है जिसने सरकारी खरीदी (समझौते) पर हस्ताक्षर नहीं किए हैं।

सन् २००३ में कानकून में पांचवी मंत्रीस्तरीय बैठक में ये चारों मुद्दे धराशायी हो गए। इनका व्यापक विरोध हुआ। रुचिकर तथ्य यह है कि कानकून बैठक में विरोध का नेतृत्व मलेशिया के व्यापार मंत्री रफिदाह अजीज ने भारत के पूर्व व्यापार मंत्री अरुण जेटली के साथ मिलकर किया। तो इन चार सिंगापुर मुद्दों पर कानकून सम्मेलन में आम सहमति नहीं बन पाई। यह बैठक सिर्फ सिंगापुर मुद्दों पर ही धराशायी नहीं हुई बल्कि कृषि मुद्दे पर भी असफल हुई। उस दौरान कपास उत्पादक का मसला भी चर्चा में आ गया। तथ्य यह है कि चार कपास देशों ने उचित कारणवश ही अपने पक्ष में अंतरराष्ट्रीय राय बना ली थी। ऐसे में कानकून मंत्रीस्तरीय बैठक असफल हो गई। अब हम सन् २००४ में पहुंचते हैं, जब कानकून की असफलता को ठीक करने के लिए मंत्री जेनेवा में मिलते हैं। उस समय वे जिस पर राजी होते हैं उसे ३१ जुलाई समझौता कहा जाता है। इसमें कुछ रुचिकर मापदंड सामने आते हैं। इसमें नए सिरे से चीजों का पुनः आकलन किया गया और वहां पुनः कमलनाथ के माध्यम से भारत ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। जुलाई समझौते से जो पहली बार सामने आया वह था स्वस्थ इसका अर्थ है पूर्ण पारस्परिकता से कुछ कम (Less Than Full Reciprocity) विकसित देश शुल्कों की कमी में ज्यादा हिस्सेदारी लेंगे या अन्य मुद्दों को भी विकासशील देशों के अनुपात या पारस्परिकता में देखा समझा जाएगा और वहां कम मात्रा में कटौती होगी। सभी मामलों में इसी सिद्धांत को जुलाई २००४ की बैठक में स्थापित किया गया। इतना ही नहीं बड़े अमेरिकी व यूरोपीय देशों ने इस समझौते में जो भी नई चीजें जोड़ी गई थीं, के बदले में व्यापार सुविधा प्राप्त करने में सफलता अर्जित की। तो, चार सिंगापुर मुद्दों के बदले में वे दुबारा से व्यापार सुविधा ले पाने में सफल हो गए और कुल मिलाकर बाकी के मुद्दों पर तो बातचीत को होना ही था। जुलाई की बैठक में ये सौदेबाजी हुई।

इसके बाद हम सन् २००४ में छठी मंत्रीस्तरीय बैठक के लिए हांगकांग पहुंचते हैं। इसमें हांगकांग मंत्रीस्तरीय घोषणा पत्र जारी होता है। इसे विकासशील देशों के लिए कृषि पर अधिक स्पष्टता प्राप्त करने हेतु महत्वपूर्ण पहल या महत्वपूर्ण उपलब्धि कहा जा सकता है। उदाहरण के लिए घोषणा की भाषा में शामिल था कि कपास सब्सिडी को बिना किसी विलंब के शीघ्रता से और महत्वाकांक्षी तरीके से संबोधित किया जाएगा।

सारे स्पष्टीकरण ज्यादा सामान्य भाषा में थे जो कि विकासशील देशों के लिए उपयोगी थे। विकसित देश बेहद अनिच्छा से यह जानते हुए कि बाद में वे क्या कर पाने में सक्षम हैं, इस पर तैयार हो गए।

अब हम सन् २००६ में चलते हैं। यह वह वर्ष है जब वैश्विक व्यापार संगठनों के इतिहास में पहली बार डायरेक्टर जनरल पास्कल लाभी जो कि यूरोपीय संघ से थे और विश्व व्यापार संगठन में काम संभालने से पहले यूरोपीय व्यापार कमिश्नर थे, ने चर्चा को निलंबित कर दिया। व्यापार चर्चाओं के इतिहास में पहले कभी ऐसा सुना नहीं गया था। वह अमेरिकी देशों की मदद करना चाहते थे। उस समय बुरा प्रशासन उस दौरान संयुक्त राज्य अमेरिका में चुनाव में जा रहा था, और उसके सामने बड़ी हार का खतरा मंडरा रहा था। तथ्य यह है कि कृषि सबसे महत्वपूर्ण मुद्दा था। यदि कृषि को लेकर किसी भी प्रकार की वचनबद्धता दिखाई जाती, तो उनकी चुनावी संभावनाएं और भी क्षीण हो सकती थीं। अतएव दोहा विकास एजेंडे की वार्ताएं सन् २००६ में निलंबित हो गईं और यह स्थिति सन् २००७ तक बनी रही। सन् २००८ की शुरुआत में कृषि वार्ताओं हेतु एक अध्यक्ष की नियुक्ति हुई। उन्हें व्यापार चर्चाओं हेतु सामान्यतौर पर एक सकारात्मक और मददगार अध्यक्ष माना गया। उनका नाम है क्राफोर्ड फाल्कोनर और वे न्यूजीलैंड से हैं। उन्होंने जिस मार्ग से चर्चाओं को पुनः प्रारंभ किया उस प्रक्रिया को फायरसाइड चेट (इसका अर्थ है व्यक्तिगत एवं आपसी आदान प्रदान के साथ विमर्श। इसमें एक मध्यमवर्गी व्यक्ति व मेहमान भी शामिल होता है। इस वजह से चर्चाएं बेहतर वातावरण में हो पाना संभव होता है।) के माध्यम से आगे बढ़ाया और बहुत से अन्य उपक्रम भी किए। अब हम सन् २००८ की मंत्रीस्तरीय बैठक पर पहुंचते हैं। इसमें उन तौर-तरीकों को तय किया जाना था जिससे कि कृषि उत्पादों पर शुल्क (टेरिफ) में कमी हो, विशेष सुरक्षा प्रणाली, विशेष उत्पाद एवं अन्य तमाम मुद्दे भी शामिल थे। अगर आप क्राफोर्ड फाल्कोनर द्वारा चिन्हित विशिष्ट तौर तरीकों पर गौर करेंगे तो पाएंगे उन्होंने विकसित और विकासशील देशों के हितों को इस तरह से बेहद संतुलित ढंग से समायोजित किया था कि उत्तर और दक्षिण दोनों ही ओर के देशों में रहने वाले व्यक्तियों ने उनके कार्य को सराहा और वे उन तौर तरीकों पर विचार करने को राजी भी हो गए थे।

इसके बाद सन् २००८ में बैठक पुनः असफल हो गई। बैठक के दौरान अमेरिका ने चर्चा का काम तमाम कर दिया और कहा कि वे इसे स्वीकार नहीं कर सकते क्योंकि अमेरिकी कृषि लॉबी वास्तव में विश्व व्यापार संगठन बैठक में डेरा जमाए बैठी थी। बैठक में जिस दिन यह लग रहा था कि स्थितियां सुधर रहीं हैं, और यह समझ बन रही थी कि अमरीकी अपना एएमएस जो कि इस बात का सूचक है सब्सिडी व्यापार का सर्वाधिक विरोध करती है (अपनी सकल मदद की मात्रा या एग्रीग्रेट मेजरमेंट आफ सपोर्ट) को नीचे लाएंगे। शुरुआत में अमेरिका इसे १५ अरब डालर तक नीचे लाने को तैयार हो गया था। एकाएक अमेरिकी कृषि लॉबी, जो कि बैठक में मौजूद थी, ने वाकआऊट कर दिया। हालांकि भारत ने भी वॉक आऊट किया था, लेकिन यह एक दूसरे मसले जिसे एसएसएम सीमा कहा जाता है, पर था। विशेष सुरक्षा प्रणाली (स्पेशल सेफगार्ड मेकेनिज्म) की सीमा वहां होती है जहां पर उत्पाद की मात्रा में एकाएक उछाल आता है और प्राप्त करने वाला देश बदले में अपनी सुरक्षा के लिए कुछ सुरक्षा शुल्क लागू करता है।

तो सन् २००८ में भी मंत्रीस्तरीय बैठक असफल हो गई, धराशायी हो गई और तब उन्होंने विश्व व्यापार संगठन के दोहा मंत्रणा दौर को पुनः प्रारंभ करने की कोशिश की। यहां यह उल्लेख करना भी आवश्यक है कि सन् २००८ में अमेरिकी दोहा दौर से प्रभावशाली ढंग से इसलिए वॉक आउट कर गए क्योंकि उन्होंने देख लिया था कि उन्हें बाजार तक पहुंच और कृषि पर हो रही चर्चाओं से ज्यादा कुछ हासिल नहीं होने वाला है। अतएव वे कूच कर गए और उन्होंने टीपीपी समझौता, ट्रांस-पेसिफिक पार्टनरशिप (अखिल प्रशांत समझौता) शुरु कर दिया। इसे पहले से चिली और सिंगापुर एवं दो और देश शुरु कर चुके थे, अमेरिका भी इससे जुड़ गया। इसने वास्तव में चर्चाओं के मार्ग निर्देशन का कार्य प्रारंभ कर दिया और यह व्यापार की आधिपत्यवादी स्वरूप की विशिष्टता ही तो है। तो वे एक अच्छा सौदा, जिसे टीपीपी कहा जाता है हथियाने में कामयाब हो गए। जहां पर उन्हें जापान से कृषि को लेकर जबरदस्त बाजार पहुंच मिल गई। इसके बाद अमेरिका ने स्वयं को विश्व व्यापार संगठन से अलग कर लिया।

साफ बात तो यह है कि उनकी वापसी तो टीपीपी समझौते के साथ ही शुरु हो गई थी लेकिन उन्हें यह शब्दजाल फैलाए रखना था कि वे विश्व व्यापार संगठन की चर्चाओं में शामिल हैं और ऐसा इसलिए भी था कि यही वह प्रभुत्ववादी उपकरण था जो कि गेट और विश्व व्यापार संगठन प्रणाली से शुरु हुआ था। तो वह इस पर से अपना नियंत्रण छोड़ना भी नहीं चाहता था। अब आता है सन् २०११, इसी समय आठवीं मंत्रीस्तरीय बैठक हुई। यह पुनः जेनेवा में हुई और उन्होंने चर्चाओं को पुनर्जीवित करने का निश्चय किया। इसका केंद्रीय उद्देश्य यह था कि वे जो लाभ की फसल काटना चाहते हैं वह पूरी तरह से लक्षित हो और इस प्रक्रिया में विकासशील देशों को पूरी तरह से गुमराह किया और वे वह सब देख ही नहीं पाए जो कि उनके सामने ही रखा था। यह अमेरिका का बनाया हुआ था, जिसे हम लाभ की फसल काटने वाले समझौते का नाम दे सकते हैं। इसी तरह से उन्होंने व्यापार सुविधा (फेसिलिटेशन) समझौते को झपट लिया। इस दौरान वे किसी अन्य क्षेत्र में उलझे ही नहीं। विकासशील देश भी इस पर राजी हो गए और मंत्रणाओं में भागीदारी करने लगे। जेनेवा में हुए आठवें मंत्रीस्तरीय सम्मेलन के बाद अगले दो वर्ष उनका ध्यान केवल इसी पर था। (अमेरिकी और यूरोपीय दबाव के कारण) तो अमेरिका ने भय पैदा किया कि यदि हम व्यापार सुविधा समझौते को निष्कर्ष तक नहीं पहुंचाएंगे, तो वह विश्व व्यापार संगठन में नहीं रहेगा। आठवीं और नौवीं मंत्रीस्तरीय बैठकों के मध्य यानी सन् २०११ व सन् २०१३ (बाली, इण्डोनेशिया) में जो कुछ घटा वह पुनः रुचिकर है। व्यापार सुविधा समझौता निष्कर्ष पर पहुंच गया। सन् २००८ में आनंद शर्मा भारतीय व्यापार मंत्री थे, और भारत सरकार इस मायने में उलझी हुई थी कि मूलतः हम अपना क्षेत्र व्यापक बाजार पहुंच समझौते के अन्तर्गत सौंप रहे हैं। वे हमेशा से कहते रहे हैं कि व्यापार सुविधा एक तरह से सीमा शुल्क (कस्टम ड्यूटी) का सरलीकरण है और साथ ही बंदरगाहों को किस तरह संभाला जाएगा, और वास्तव में यह मुख्य लक्ष्य भी नहीं है। मेरे कहने का अर्थ है वास्तविक लक्ष्य है व्यापार सुविधाओं के माध्यम से बाजार तक पहुंच पर ध्यान लगाना। बाली में भारतीयों और जी-३३ (विकासशील देशों का समूह जिसका नेतृत्व इंडोनेशिया कर रहा था) सार्वजनिक भंडार (पीएसएच) व खाद्यसुरक्षा के लिए कार्यक्रम के मुद्दों को सामने लाए क्योंकि उस समय तक सार्वजनिक भंडारण कार्यक्रम से संबंधित मुद्दे

तलवार की धार पर चलने जैसे हो चुके थे। भारत ने तब तक विश्व व्यापार संगठन की नियम पुस्तिका में लिखी सीमाओं, खासकर बहुत कम (नगण्य) वस्तुओं को लेकर सीमा रेखा का उल्लंघन करना शुरू कर दिया था। ऐसे में भारत ने कई विकासशील देशों को साथ में लेकर यह मुद्दा रखा और इसे केंद्र में ले आए और यह धमकी भी दी कि यदि उनके साथ पीएसएस समझौता नहीं होता तो यह समूह व्यापार सुविधा समझौते में अड़ंगा लगा देगा। अंततः अमेरिका, और अन्य यूरोपीय संघ देश, क्रैन्स समूह निर्यात देश, जिंजर समूह (समूह के भीतर अधिक उत्तेजक देश) जो कि कृषि मंत्रणाओं में बहुत ताकतवर थे सहमत हुए। क्रैन्स आस्ट्रेलिया में वह स्थान है जहां सभी कृषि उत्पादक देश एकत्रित हुए थे। यह वास्तव में उरुग्वे दौर के दौरान हुआ था और उनके पास बेहद महत्वाकांक्षी एजेंडा था। इस समूह में रूस भी शामिल था, जो कि लगातार चौथा महत्वाकांक्षी प्रस्ताव जिसमें बाजार तक पहुंच, शुल्क में कमी घरेलू सब्सिडी को मदद व सभी सब्सिडी शामिल हैं, को लगातार आगे करता रहता है। यहां यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि विश्व व्यापार संगठन के कृषि पर समझौते के अन्तर्गत एक प्रावधान है जिसे अंबर बाक्स सब्सिडी कहा जाता है और ये वे सब्सिडी हैं जिन्हें प्रगतिशील (बढ़ावा देने) ढंग से कम करते जाना है। इसके बाद आपके पास नगण्य (न्यूनतम डी मिनिनिस) है, जो कि विकासशील देशों के लिए हैं और इसका कथन है १० प्रतिशत से कम को किसी भी कटौती से छूट मिलेगी, लेकिन यदि आपके उत्पादन का स्तर १० प्रतिशत को पार कर गया, जैसा कि भारत में चावल के साथ हुआ है, तो यह छूट नहीं मिलेगी। भारत का डी मिनिनिस १० प्रतिशत से ज्यादा हो गया है।

बाली पीस क्लॉज (शांति धारा) जिस पर नवंबर - २०१४ में पुनः स्पष्टीकरण दिया गया था को भारत ने पिछले साल पहली बार रद्द किया और अब पुनः रद्द किया। अमेरिकी और अन्य देश भारत पर चिल्ला रहे हैं और आरोप लगा रहे हैं कि उसने विश्व व्यापार संगठन के नियमों की अवहेलना की है। इसके साथ वे यह भी कह रहे हैं कि पिछले डेढ़ वर्षों में हमने इसी तरह के अन्य और भी कार्य किए हैं। बाली में हमने एक लाभ का सौदा किया था और वह सौदा यह था कि वह एक स्थायी समाधान यानी (वर्तमान में प्रचलित अंतरिम समाधान) के बदले में व्यापार सुविधा के लिए तैयार हो जाएगा।

इस स्थायी समाधान के अवयव है खाद्यसुरक्षा के लिए सार्वजनिक भंडारण कार्यक्रम की अनिवार्यता, भारत और अन्य कई देशों को खाद्यान्न जैसे कि चावल, गेहूँ और कुछ अन्य वस्तुओं पर छूट प्राप्त होना, जिससे कि वे उन नियमों को उल्लंघन कर पाएं जो कि पहले से कृषि पर समझौते के माध्यम से वहां मौजूद हैं। बाली बैठक की मुख्य बात यह है कि विकसित देश बड़े स्तर पर बहुत कुछ हथियाने में सफल हो गये या व्यापार के बोल (भाषा) को उन्होंने अपने कब्जे में जेब में रख लिया (इसका अर्थ है आपको एक समझौता प्राप्त हो गया, आपने उसे जेब में (हथिया) रख लिया, और उसके बाद आपने आँखे फेर लीं। (आप जानते हैं, आपने ही बाधाएं खड़ी कीं और यह तब तक चलता रहा जब तक कि आपकी चिंताओं/आकांक्षाओं का निराकरण नहीं हो गया)। इस तरह इन उत्तरी देशों ने व्यापार सुविधा समझौते को अपनी जेब में रख लिया। यही तो उनकी मुख्य मांग भी थी।

सन् २०१४ और २०१५ में दोहा दौर (राउंड) के दौरान अमेरिकियों (यूरोपीय संघ और अन्य विकसित देश) ने कहा कि हम कृषि से संबंधित किसी भी मसले पर कोई समझौता करने वाले नहीं हैं। दोहा समझौते के अन्तर्गत अब हम कृषि को लेकर किसी भी तरह का कोई सौदा या समझौता नहीं करेंगे। यह तो उन चर्चाओं से मुँह मोड़ लेना था, जिनका उद्देश्य था खाद्यसुरक्षा हेतु सार्वजनिक भंडारण को लेकर हुए अंतरिम समझौते को स्थायी बनाना।

अब हम नैरोबी पहुंचते हैं। यह विश्व व्यापार संगठन की दसवीं मंत्रीस्तरीय बैठक है। यहां पर उन्होंने परिणाम दस्तोवज में एक ऐसी भाषा निर्मित की है, जो बता रही है कि कुछ ऐसे देश हैं जो कि दोहा चर्चाओं का समर्थन करते हैं और इसके पश्चात ऐसे भी देश हैं जो कि दोहा चर्चाओं की निरंतरता का समर्थन नहीं करते हैं। उसी भाषा में वे भविष्य के लिए बहुपक्षीय चर्चाओं की बात करते हैं जो कि मूलतः इस पहल पर हस्ताक्षर करने वालों तक ही सीमित होगी। (निरपवाद रूप से यह बहुपक्षीय चर्चाएं शक्तिशाली देशों द्वारा नियंत्रित हैं) उन्होंने (विकसित देश) सन् २०१५ में इसकी घोषणा की और सार्वजनिक भंडारण कार्यक्रमों के किसी स्थायी समाधान को लेकर किसी भी फैसले पर पहुंचने से इंकार कर दिया।

यह भविष्य के लिए एक खोखला वायदा था। उदाहरण के लिए यदि आप नैरोबी मंत्रीस्तरीय समझौते को उसके संपूर्ण कार्यात्मक क्षेत्र के मद्देनजर पढ़ेंगे, तो इसमें स्थायी समाधान पर सवाल वाली बात का उल्लेख ही नहीं है। यह संयुक्त राज्य अमेरिका की एक सफलता थी, जिसमें कि वे सन् २०१५ में “दोहा” शब्द के विलोपन को सफलतापूर्ण सुनिश्चित कर पाए। यह बात पुनः सन् २०१७ तक आगे ले जाई गई। इतना ही नहीं मंत्रीस्तरीय बैठक का कोई परिणाम सामने नहीं आया। यह विश्व व्यापार संगठन की ग्यारहवीं मंत्री स्तरीय बैठक थी जो कि दिसंबर २०१७ में ब्यूनस आयरस में हुई थी।

वहां पर भी कुछ बातों को छोड़कर कोई समझौता नहीं हो पाया। वहां जो अन्य रुचिकर पहल हुई वह थी कि पहली प्राथमिकता उनकी अपनी पहली प्राथमिकता है और दूसरी प्राथमिकता है मछली पालन सब्सिडी। मछली पालन संबंधी सब्सिडी को लेकर वास्तविक जमीनी कार्य सन् २०११ में जेनेवा में शुरू हुआ था। ब्यूनस आयरस में वे मछली पालन पर मंत्री स्तरीय निर्णय पाने में सफल हो गए। यहां उन्होंने (विकसित देश मछली पालन को अनुशासित करना चाहते थे) संयुक्त राष्ट्र सुस्थिर विकास लक्ष्य (SDG) की भाषा का पहली बार प्रयोग किया जो कि SDG.14.6 में आता है। यह वास्तव में क्लेफ्ट १४.६ को मजबूत बनाने का कार्य था। इससे यह अनिवार्य हो जाता है कि मछली पालन पर सब्सिडी पर चर्चा संयुक्त राष्ट्र संघ सुस्थिर विकास लक्ष्य (SDG) १४.६ के हिसाब से ही हो। इतना ही नहीं ब्यूनस आयरस मंत्रीस्तरीय बैठक में लिए गए निर्णय ने एसडीजी १४.६ की भाषा को मजबूत बनाया। अब हम निगाह डालते हैं सन् २०१७ से २०२१ के मध्य के घटनाक्रम पर। मछली पालन सब्सिडी पर हुई मंत्रणाओं में बड़े औद्योगिक देशों, यानी मेरा कहना है बड़े सब्सिडी प्रदाताओं से जिसमें करीब १० देश शामिल हैं, ये हैं अन्य देशों के अलावा चीन, यूरोपीय संघ, संयुक्त राज्य अमेरिका, जापान कनाडा, कोरिया और ताइपेई। जो कि बड़ी मात्रा में सब्सिडी प्रदान करते हुए औद्योगिक स्तर पर मछली मारते हैं, ने एक ढांचा तैयार किया। तो, यह सब्सिडी मंत्रीस्तरीय समझौते के अध्यक्ष के नवीनतम समझौते के अनुच्छेद ५.१ में उल्लेखित है।

उनका कहना है कि सब्सिडी संबंधी छूट तभी मिलेगी जबकि ये देश यह दर्शा पाएं कि वे कुछ खास तरह की मछलियाँ जो कि (विलुप्त के कगार पर है) को लेकर ऐसे कदम उठाएंगे जिससे कि उनकी सुरक्षा व संरक्षण को सुनिश्चित किया जा सके। यह बेहद व्यापक चेतावनी है, क्योंकि कोई भी यह सिद्ध नहीं कर सकता कि वह क्या उपाय उठा रहा है, लेकिन आप यह जतला सकते हैं कि हम ऐसा कर रहे हैं और अब आपको इन सब्सिडी से छूट मिल गई है। अंततः बहुत प्रभावशाली ढंग से इस प्रक्रिया ने उन लक्ष्यों को जो कि अनुच्छेद ५.१, संरा.एस.जीडी.१४.६ एवं ब्यूनस आयरस घोषणा में तय किए गए थे, को नष्ट कर दिया। इनका लक्ष्य था अत्यधिक मछली मारने पर प्रभावशाली ढंग से सब्सिडी को प्रतिबंधित करना। (और यह SDG-14-6 के सबसे जरूरी आधार स्तंभ में जिनके अन्तर्गत अत्यधिक मछली मारने और अत्यधिक क्षमता दोनों ही स्थिति में सब्सिडी को बंद करने को कहा गया है।) साथ ही अवैध व अनियोजित तरह से हो रही मछली मारने को रोकना। यह एक ऐसा खुल्लमखुल्ला विषम समझौता है जिसके अंतर्गत बड़े सब्सिडी प्रदाताओं को हमारे सब्सिडी ढांचे के आधार पर औद्योगिक स्तर की मछली मारने की अनुमति होगी। इसके परिणामस्वरूप वैश्विक मछली भंडार में कमी आएगी। मछली पालन सब्सिडी के वर्तमान मसौदे में, इस भाषा का सत्यानाश कर दिया गया है।

इससे भी अधिक मजेदार यह है कि, कुछ विशिष्ट बड़े सब्सिडी प्रदाता अक्सर ही विशेष और विभेदक व्यवहार को उल्टे अर्थ में लेते रहे हैं, क्योंकि उन्होंने अपनी सब्सिडी को जारी रखा हुआ है। ऐसा वे इस तरह कर पाते हैं, वे बताते हैं कि वे मछलियों के संसार (भंडार) से जोखिम (विलुप्त) में पड़ी मछलियों का संरक्षण कर रहे हैं। यह अत्यंत अतार्किक व असंगत है और अनेक विकासशील देशों का यह मत है कि यह पूर्णतया असंतुलित है और यह अधिकार पत्र के तारतम्य में भी नहीं है। इसी समय अमेरिका सब देशों को अलग-अलग करना चाहता है और वह एक विवादास्पद विचार जिसे विकासशील देशों विशेष एवं विभेदक बर्ताव हेतु विभिन्नता प्रदान करना कहा जाता है को सामने लाता है। इस सबमें अमेरिका के समर्थन में यूरोपीय संघ तथ अन्य विकसित देश भी जुड़ गए।

उनका कहना था कि यह प्रक्रिया ऐसी नहीं होगी कि जहां सभी विकासशील देशों के साथ एक सा बर्ताव होगा, कुछ देशों को पहुंच उपलब्ध होगी व अन्य देशों को एस एण्ड डी टी को लेकर परिवर्तनकाल से गुजरने हेतु कुछ अन्य विकासशील देशों की बनिस्बत अधिक लचीलापन प्राप्त हो सकेगा।

आपमें से जिनकी रुचि है वे मंत्रीस्तरीय निर्णय के वर्तमान मसौदा के अनुच्छेद ५.४ की भाषा देखें। इसकी शुरुआत एक टिप्पणी (फुट नोट) - टिप्पणी - १२ से हुई है। इस टिप्पणी का लक्ष्य है चीन को बाहर रखना। इसमें कहा गया है कि जिन देशों के पास वैश्विक मछली भंडार का १० प्रतिशत या १० प्रतिशत से ज्यादा है वे इस विशेष व विभेदक व्यवहार का इस्तेमाल नहीं कर पाएंगे। यह उस मांग के ठीक विपरीत है, जो कि भारत और कई अन्य विकासशील देश जिनमें इंडोनेशिया भी शामिल है और जिनके यहां विशाल मछुआरा समुदाय है, ने की थी। इस समझौते से जो कुछ उभरकर आया है वह तो भारत के लिए दोहरी चिन्ता का विषय होना चाहिए। अगर हमें चाहा गया लचीलापन नहीं उपलब्ध कराया जाता है, खासकर २५ वर्षों की छूट तो हमारे सामने भारी समस्या खड़ी हो जाएगी। ध्यान देने योग्य है कि इन सबको ध्यान में नहीं लिया गया और इसे चर्चाओं पर छोड़ दिया गया। अतएव जब तक भारत इन मंत्रणाओं में जबरदस्त लड़ाई नहीं करता, उसे २५ वर्ष वाली धारा नहीं मिलेगी और संभव है उसे कई अन्य तरह का लचीलापन भी न मिल पाए। इससे स्पष्ट है कि यह पूरा समझौता मछलीपालन क्षेत्र में विषमताओं के साथ ही लिखा गया है।

अब हम कृषि क्षेत्र की ओर चलते हैं। कृषि क्षेत्र में दो बातें साथ-साथ घट रही हैं। इनमें से कुछ अनिवार्य विषय हैं। (दसवीं मंत्रीस्तरीय से ग्यारहवीं और अब बारहवीं बैठक तक) इस मंत्रीपरिषद बैठक में सार्वजनिक भंडारण कार्यक्रम पर किसी निष्कर्ष पर पहुंचना चाहिए बजाय इसके कि इसका निष्कर्ष तक पहुंचना अनिवार्य है के। चूंकि यह एक महत्वपूर्ण मुद्दा है, लेकिन अमेरिकी इस संबंध में किसी स्थायी समाधान को कभी भी स्वीकार नहीं करेंगे। वास्तविकता तो यही है कि यह तो वे ही हैं जिन्होंने सन् २०१७ में ब्यूनस आर्यस में तब हो रहे उस समझौते को रोक दिया था जिसमें जो कुछ भी बाली अंतरिम पीस क्लाज से अर्जित किया गया था, उससे ज्यादा की मांग प्रस्तावित थी। यह सन् २०१७ की बात है, उस दौरान हमारे साथ सर्वश्रेष्ठ में से एक चर्चाकार (जे.एस.दीपक) थे और उनका इस पूरे मुद्दे में जबरदस्त सार्थक योगदान है,

क्योंकि उन्होंने न केवल व्यापार सुविधा/समझौते (TFA) को रोक बल्कि भारत को सन् २०१४ के मसविदे (प्रोटोकाल) पर हस्ताक्षर करने से भी रोक लिया। उन्होंने नैरोबी में भी स्थायी समाधान को लेकर बहुत प्रयत्न किए। वास्तव में यदि आप ब्यूनस आर्यस चर्चाओं के अध्यक्ष (फेसिलिटेटर) जो कि स्वयं केन्या के राजदूत थे का वक्तव्य पढ़ेंगे तो उस मसौदे में शामिल सभी विचार, स्थायी समाधान (जो कि दीपक का मुख्य योगदान है) को अमेरिका ने रोक दिया। (यह ट्रंप प्रशासन के समय की बात है)

अब हम बारहवीं बैठक की तैयारी में हैं। कृषि क्षेत्र का रास्ता एक प्रतिष्ठित मुद्दा है और इसका अध्यक्ष (चेयर) से जुड़ाव भी है। इस वर्ष अध्यक्ष की कुर्सी पर कोस्टारिका राजदूत हैं और यह केअर्न समूह का एक आक्रामक प्रतिभागी है। अध्यक्ष ने एक मसौदा समझौता प्रस्तुत भी किया था। जिसकी नवंबर बैठक में काफी छीछलेदर भी हुई थी। वहां पर भारत ने बहुत कठोर भाषा का प्रयोग किया था और कहा था, “आपने (अध्यक्ष) बारहवीं मंत्रीस्तरीय बैठक में किसी परिणाम तक पहुंचने की संभावना को ही तकरीबन उड़ा दिया है। (खत्म कर दिया है)” तो कोस्टारिका के राजदूत (जो अध्यक्ष भी है) ने जो किया वह यह था कि, उन्होंने कहा कि स्थायी समाधान का अनेक देश विरोध कर रहे हैं और इस मुद्दे पर व्यापक असहमति भी है तथा इस विषय पर अभी बात नहीं हो सकती। अतएव आवश्यक है कि इसे तेरहवें मंत्रीस्तरीय सम्मेलन में ले जाया जाए। जिस तरह की भाषा अध्यक्ष ने प्रयोग की है वह विकासशील देशों के हितों के खिलाफ शत्रुवत ही है। इसके बजाय उन्होंने बाजार तक पहुंच और व्यापार विरूपण सब्सिडी में कमी को ऊँचे पायदान पर रखा। यही तो केअर्न समूह के देश चाहते थे। इसके अलावा जो भाषा का प्रयोग की गई है उसका लक्ष्य भी उत्पादन से संबंधित सब्सिडी तक नहीं बल्कि आगत (इनपुट) सब्सिडी और अन्य तमाम बातों पर है। विश्व व्यापार संगठन के कृषि पर समझौते में धारा ६.२ है जिसमें विकासशील देशों को ग्रीनबाक्स (विकासशील देशों के लिए सिंचाई हेतु बिजली और अन्य कई वस्तुओं) में किसी भी कमी करने वाली प्रतिबद्धता (जिम्मेदारी) से छूट मिली हुई है। परंतु ये केअर्न समूह के देश जिनका नेतृत्व अमेरिका कर रहा है, वे इसे भी हटाना चाहते हैं। यह सब सन् २०१४ से अब तक लगातार चल रहा है। इनका निशाना अनुच्छेद ६.२ है जिसने न्यून (मिनिमिस कार्यक्रमों) और अन्य तमाम सब्सिडी का उल्लेख है, जो कि विकासशील देश देते हैं।

विश्व व्यापार संगठन में सुधार

उपरोक्त दो क्षेत्रों के अलावा, सबसे बड़ी चुनौती उस क्षेत्र को लेकर है जिसे विश्व व्यापार संगठन में सुधार कहा जा सकता है और विकासशील देशों के लिए यह एक बड़ी चुनौती है कि वह इसे अपनी पकड़ में ले और इस हेतु संघर्ष करें। विश्व व्यापार संगठन में सुधार के भेष में विकसित देश, प्राथमिक तौर पर अमेरिका और यूरोपीय संघ, चाहते हैं कि सामुहिक निर्णय प्रक्रिया के सिद्धांत को ही खत्म कर दिया जाए। अगर आप मारकेश समझौते को देखें तो उसकी भाषा से स्पष्ट है कि समझौते बहुपक्षीय चर्चाओं से होंगे। इन्हें आम सहमति (सर्वसम्मति) से अपनाया जाएगा और सभी सदस्य इसके अनिवार्य पक्ष होंगे और यदि एक सदस्य भी विरोध करता है तो समझौता रद्द माना जाएगा।

दूसरी बात जो वे चाहते हैं, वह है, भेद या विशिष्टता। (यह भी चर्चाओं की प्रक्रिया के स्वरूप में) विकसित दुनिया की मांग है कि विश्व व्यापार संगठन हर हाल में विकासशील देशों से भेद करे, खासकर विशेष एवं विभेदक व्यवहार को प्राप्त करने के लिए स्वयं के द्वारा विकसित स्तर को इस्तेमाल करने में। इसका प्राथमिक ध्येय है भारत, इंडोनेशिया, दक्षिण अफ्रीका और ३० अन्य देशों को इस स्थिति का लाभ न उठाने देना।

विश्व व्यापार संगठन में तीसरे सुधार के रूप में वे चाहते हैं कि अनौपचारिक बहुपक्षीय संयुक्त राज्य अमेरिका की पहल को कानूनी करार दिया जाए। यह मामला सन् २०१७ में ब्यूनस आर्यस बैठक में ही शुरू हुआ था। अब विकसित देशों के समूह जो मुद्दे लाए थे, वे हैं, निवेश सुविधा, डिजिटल व्यापार, इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य, और उनके (विकासशील देश), सूक्ष्म, छोटे मध्यम उद्यमों पर अंकुश। यह उत्तरी देशों की प्राथमिक चिंताएं हैं और भारत सरीखे देशों और दक्षिण अफ्रीका ने उन प्रस्तावों में बाधा डाल दी। ये देश सभाकक्ष से बाहर आ गए और उन्होंने चारों पूर्व उल्लेखित मुद्दों पर कुछ संयुक्त वक्तव्यों संबंधी पहल की घोषणा शुरू कर दी। यह कमोवेश अतिथिवादी था और यह बेहद आल्हायित करने वाला भी था। इन देशों को अचानक ही वास्तविक बहुपक्षीय प्रक्रिया में हार का सामना करना पड़ा, और वे अपना मत बदलने को और श्रेष्ठ संयुक्त वक्तव्य पहल की घोषणा को तैयार हो गए।

यह संयुक्त वक्तव्य मारकेश समझौते की धारा ६ के द्वारा तय उस प्रक्रिया के विपरीत है, जिसके अन्तर्गत विश्व व्यापार संगठन में निर्णय लेने पर पहुंचने हेतु नियम बनाए गए हैं।

चौथी है, वॉकर रिपोर्ट, जो कि न्यूजीलैंड के राजदूत डेविड वॉकर के नाम पर है। न्यूजीलैंड ओटावा समूह का हिस्सा है। यह समूह महामारी का इस्तेमाल व्यापार उदारीकरण और बाजार तक पहुंच सुधार के लिए बिना मुख्य मुद्दों पर बात किए पहुंचना चाहता है। जबकि उनमें से ट्रिप्स को हटाना सर्वश्रेष्ठ समाधान है। इस प्रक्रिया में मूलतः ट्रिप्स को हटाने की मांग को बाहर (बहिष्कृत) कर दिया गया है और इसके स्थान पर एक बहुत ही खतरनाक एजेंडा “स्वास्थ्य में व्यापार” को शामिल कर लिया गया है।

क्या हम उतार पर हैं ?

क्या हम वास्तव में एक उतार या वापस मुड़ने की स्थिति में हैं ? क्योंकि विकासशील देशों को जिस तरह से अपनी एकजुटता दिखाना चाहिए वे उस तरह से उसे दिखाने में सक्षम नहीं हो पा रहे हैं। आवश्यकता इस बात की है कि वे विश्व व्यापार संगठन में सुधार को लेकर सामुहिक रूप से इस तरह के प्रस्तावों का विरोध करें जो कि चर्चाओं की कार्यविधि हेतु बनाए जा रहे हैं। इससे उनमें मनमाने ढंग से नियमों में परिवर्तन का रास्ता खुल सकता है।

विश्व व्यापार संगठन के तीन आधार स्तंभ हैं, चर्चाओं की कार्यविधि (फंक्शन), विवादों का निपटारा और अधिसूचना एवं विश्व व्यापार संगठन सचिवालय की भूमिका को बढ़ाने और मजबूत करने हेतु क्रियान्वयन कार्यविधि से संबंधित गतिविधियां। पहले स्तंभ को तो तकरीबन स्थायी लकवा मार गया है। दूसरा स्तंभ अर्थात् द्विस्तरीय विवाद निपटारे को लेकर कहना है कि अपील करने वाली इकाई के आठ सदस्यों के चयन को बाधित करके अमेरिका ने इसे बेहद कमजोर कर दिया है। (मूलतः वह अपील करने वाली इकाई को खत्म कर देना चाहता है) तो आपके पास द्विस्तरीय विवाद निपटान प्रणाली के अन्तर्गत एक अपील करने वाली संस्था है। आपके पास पहले स्तर पर ही पेनल है जहां पर विवाद दाखिल किए जाते हैं।

इस सबसे ऊपर एक अति महत्वाकांक्षी डायरेक्टर जनरल हैं। वह विश्व बैंक की मैनेजिंग डायरेक्टर रह चुकी हैं। वे सोचती हैं कि किसी भी कीमत पर समझौते निष्कर्ष तक पहुंचना ही चाहिए, फिर चाहे बाद में वे असफल हों या उनमें स्वीकृत अधिदेश (निर्देशों) को पूरा कर पाने की क्षमता भी मौजूद न हो। यह एक काव्यात्मक न्याय है सिर्फ यूरोपीय संघ और अन्य लोगों के लिए जो कि ट्रिप्स सहित सभी विकासात्मक पहलों को बड़ी आसानी से रोक रहे हैं।

तो यह स्थिति है। मैं यहां खुद को रोकता हूँ।